विप्लव प्रकाशन सं०—२८

नशे नशे की बात !

तीन दृश्य कहानियां अथवा नाटक

नशे नशे की बात !

रूप की परख

गुडबाई दर्दे-दिल !

यशपाल

विप्लव लखनऊ

अप्रैल १९५२

मूल्य दो रुपया आठ आना

प्रकाशक—
विप्लव कार्यालय,
लखनऊ.

मुद्रक—
साथी प्रेस
लखनऊ.

विचार द्वारा आचार का मार्ग

ग्रहण करने की भावना को

समर्पित



यशपाल

क्रम

प्रसंगवश :—

यह तीन दृश्य-कहानियां इस ढंग से लिखी गयी हैं कि पढ़ने में दृश्य कहानी का प्रयोजन पूरा कर सकें और रुचि अथवा अवसर होने पर रंगमंच पर भी उतारी जा सकें।

इन नाटकों की रंगमंच सम्बन्धी सफलता के बारे में इतना कहना अप्रासंगिक न होगा कि 'नशे नशे की बात' ! और 'गुडबाई दर्दे-दिल !' का अभिनय लखनऊ तथा दूसरे स्थानों पर किया जा चुका है। 'नशे नशे की बात' ! का अभिनय ३१ अप्रैल १९५१ की संध्या लखनऊ के 'छतर मंजिल हाल' में विशिष्ट वर्ग के कला पारखियों के सामने हुआ था। अभिनय में भाग लेने वाले सभी लोगों के नौसिखिये (amatures) होने पर भी नाटक और उसका अभिनय अत्यन्त सफल समझा गया। हाल में उपस्थित लोगों में से एक भी व्यक्ति हिलता-जुलता या असन्तोष प्रकट करता न देखा गया। 'गुडबाई दर्दे-दिल !' का अभिनय 'अवध वूमेंस एसोसियेशन' की अभिनय में रुचि रखने वाली सदस्याओं ने अपने अधिवेशन के समय किया था। अनुभव की कसौटी पर इन नाटकों की जांच होने के बाद पुस्तक रूप में प्रकाशित करते समय भी इन में आवश्यक परिवर्तन, और परिवर्धन कर दिये गये हैं।

'नशे नशे की बात !' और 'रूप की परख' के अभिनय का समय प्रायः एक घण्टे और बीस मिनिट के लगभग है और 'गुडबाई दर्दे-दिल !'

के अभिनय का लगभग आध घण्टे। नाटक का आयोजन परिमित व्यय और सीमित साधनों से करने वाले लोगों के लिये 'नशे नशे की बात'! और 'रूप की परख' में आरम्भ से अन्त तक दृश्य परिवर्तन करने की आवश्यकता न होना विशेष सुविधाजनक हो सकता है। 'गुडबाई दर्दे-दिल !' में एक बार पटपरिवर्तन आवश्यक होगा।

× × ×

लखनऊ में 'नशे नशे की बात'! का अभिनय होने पर कुछ साम्प्रदायिक पत्रों में नाटक के विचारतत्व पर आलोचना हुई थी। इस आलोचना का सार यह था कि नाटक के घटनाक्रम द्वारा आध्यात्मिकता के नशे के प्रति शराब के नशे से भी अधिक वितृष्णा प्रकट करने की चेष्टा की गई है। ऐसा निष्कर्ष आलोचकों की आध्यात्मिकता के प्रति अति श्रद्धा के कारण ही निकाला गया है। शराब के नशे की प्यास के कारण या उसमें डूब कर अपने पारिवारिक और सामाजिक कर्तव्य के प्रति उपेक्षा के लिये नाटक में कोई सहनशीलता नहीं दिखाई गई। यही भावना आध्यात्मिकता के नशे से कर्तव्य की उपेक्षा के प्रति है। आध्यात्मिकता के नशे के प्रति समाज में जो आदर की भावना जमा दी गई है, उसके प्रति विद्रूप अवश्य है।

'रूप की परख' का कथानक पारिवारिक जीवन की एक साधारण घटना के आधार पर लिया जाना कुछ आलोचकों को नाटक की विशेषता को कम करता जान पड़ा है; या, इस विषय पर अन्य लेखकों द्वारा पहले बहुत कुछ लिख दिया जाना इस नाटक की नवीनता को समाप्त कर देता है। यह नाटक नवीनता के दावे के लिये नहीं लिखा गया है। केवल नवीन बातों पर ही लिखने की प्रतिज्ञा के लिये गर्व करना व्यर्थ है। यदि किसी घिसीपिटी बात को सजीव बना दिया जा सके तो वह भी कम सफलता नहीं? इस विषय में जिस ढंग से, जो कुछ लिखा गया है या अब तक मुझे देखने को मिला, उससे संतुष्ट न होने के कारण मैंने भी प्रयत्न किया है।

'गुडबाई दर्द-दिल !' शीर्षक से एक कहानी मेरे 'वो दुनिया' कहानी संग्रह में प्रकाशित हो चुकी है। नाटक के कथानक और उस कहानी में बहुत कुछ समता होते हुए भी इनमें अन्तर भी बहुत है। दोनों के वार्तालाप और परिणाम तक पहुँचने के ढंग में बहुत अन्तर है। 'गुडबाई दर्द-दिल !' में प्रेम की भावना का परिहास कर देना ही अभीष्ट नहीं। अभिप्राय है कि प्रेम यदि व्यक्तियों के परस्पर आकर्षण का सुसंस्कृत रूप है तो व्यक्ति की यह संस्कृति केवल यौन-आकर्षण में ही प्रकट न होकर सामाजिक व्यवहार में भी प्रकट होनी चाहिये ! मनुष्य के दुख-दर्द के प्रति रणजीत की हृदयहीनता देख शशि उसकी अपने प्रति सहृदयता में विश्वास नहीं कर सकती। सामाजिक व्यवहार में दिल का दर्द न होने पर केवल यौन-आकर्षण में ही दिल के दर्द का दावा केवल अभिनय मात्र है, विडम्बना है ?

यशपाल
बैशाखी १९५२

नशे नशे की

एकांकी नाटक

अथवा

दृश्य कहानी

पात्र

राधेमोहन—बड़े भाई की मृत्यु के बाद अनिच्छा से शराब की दुकान सम्भालने के लिये विवश, कालिज की शिक्षा प्राप्त, भावुक, सुधारवादी नवयुवक।

छिद्दू-काका—राधेमोहन के परिवार का पिता के समय से चला आया, स्वामीभक्त और शुभचिन्तक बूढ़ा नौकर।

कामता—शराब की लत में अपने परिवार से निरपेक्ष कारखाने का मजदूर।

किसनलाल—कभी-कभी शराब खरीदने वाला ग्राहक।

बद्री—अभ्यासी शराबी। कामता का परिचित ग्राहक।

कामता की बहू—अपने पति की शराब पीने की आदत से और अपने बच्चों का पेट भर सकने के लिए परेशान स्त्री।

नन्दलाल—प्रौढ़ आयु के कांग्रेसी भद्र पुरुष। लोगों को समझा बुझा कर नशाखोरी छुड़वा कर समाज का सुधार करने की चेष्टा करने वाले सज्जन।

जीवन—सेवा समिति और समाजसुधार के कामों में भाग लेने वाले महाशय नन्दलाल का सहायक युवक।

लड़का ग्राहक—अपने चाचा के लिए शराब खरीदने के लिए आने वाला वयस्क लड़का।

जीजी—राधेमोहन की विवाहित बहिन। पति के गृहस्थ छोड़ सन्यास ग्रहण कर लेने के कारण अपनी सन्तान सहित भाई के पास लौटी हुई।

अवसर और समय
होली से पहले दिन की संध्या

नोट—इस नाटक में छिद्दू-काका द्वारा प्रयोग की गई भाषा साधारणतः नगरों में प्रयोग की जाने वाली हिन्दी है। रंगमच पर स्थानीय वातावरण उत्पन्न करने के लिये छिद्दू-काका के मुख से अवध में अवधी, पश्चिमी उत्तरप्रदेश में ब्रजभाषा या बुंदेलखंडी अथवा हरियाना की लोकभाषा का प्रयोग किया जा सकता है।

नशे-नशे की बात

पर्दा उठता है

(संध्या का समय है। अंधेरा अभी घना नहीं हुआ है। गलियों और मकानों में रोशनी नहीं हुई है।

रंग मंच पर एक देसी शराब की दुकान है। दुकान के भीतर लकड़ी का एक जंगला आधोआध लगा कर दुकानदार के बैठने का स्थान और शराब की आलमारियाँ गाहकों की पहुंच से सुरक्षित कर दी गई हैं। बिना किवाड़ों की आलमारियां दीवारों के साथ सटी हैं। भिन्न-भिन्न रंगों की शराब की बोतलें आलमारियों के अलग-अलग खानों में कतारों से लगी हैं। ठेकेदार के बैठने के लिये जंगले के भीतर एक तख्त है। तख्त पर एक साफ़ दरी बिछी है। सहारे के लिये दीवार के साथ एक साफ़ सुथरा गाव तकिया लगा है और बैठने की जगह के सामने एक सन्दूकचीनुमा डेस्क है। डेस्क पर अंग्रेज़ी अखबार तहाया हुआ रखा है। जंगले के बाहर दीवार के साथ दायीं ओर ग्राहकों द्वारा लौटाई हुई कई खाली बोतलें बेतरतीब पड़ी हैं। जंगले के बाहर बायीं ओर दीवार में एक दरवाजे से जीना दिखाई दे रहा है। यह जीना दुकान के ऊपर रिहाइशी जगह को चला जाता है।

जंगले के बाहर एक बेंच जंगले से सटा हुआ पड़ा है। बेंच पर परिवार और दुकान का पुराना नौकर छिद्दू-काका पाल्थी लगाये बैठा है। वह हथेली पर सुरती मल रहा है। छिद्दू-काका एक मैली सी धोती घुटनों तक पहने है।

शरीर पर एक कुर्ता और मिरजई है। उसके कपड़ों पर जहां-तहां गुलाबी, हरा और पीला रंग पड़ा दिखाई दे रहा है और जगह-जगह आलू से बनी 'उल्लू' 'गधा' आदि की होली की मोहरें लगी हैं। छिद्दू-काका का बूढ़ा शरीर दुबला-पतला है। जान पड़ता है कि उसने आयु कठिन मेहनत में बिताई है। दाढ़ी मुंडी हुई है और खिचड़ी मूंछें लम्बी हैं और झुकी हुई। छिद्दू-काका बूढ़े थके स्वर में होली का गाना गुनगुना रहा है—

गोरी मारो भर पिचकारी
होली खेलें कृष्ण मुरारी।

छिद्दू-काका होली गाते गाते हथेली पर सुरती फटक कर निचले होंठ में दबा हथेली अपने कपड़े पर पोंछ अपने गीत की कड़ी समाप्त किये बिना जीने की ओर देख पुकारता है।)

छिद्दू काका—"छोटे बाबू! ओ छोटे बाबू!"

(उत्तर की प्रतीक्षा कर और उत्तर न पा मुह पर हाथ रख कुछ ऊँचे स्वर में फिर पुकारता है)—**लक्ष्मी! ओ लक्ष्मी! अरे छोटे बाबू को भेजो दुकान में।...क्या कर रहे हैं छोटे बाबू?"** (सिर खुजाते हुए स्वगत) **"किताब, अखबार पढ़ रहे होंगे और क्या? खबरें कित्ता पढ़ डाला। क्या बनेगा पढ़-पढ़ कर? दिन पढ़ें, रात पढ़ें** (हाथ हिलाकर) **अपना जो काम है, सो न करेंगे। दुकान पर न बैठेंगे!**

(जीने पर से किसी के तेजी से उतरने की आहट आती है और ज़ीने के दरवाज़े से दुकान का मालिक नवयुवक राधेमोहन साफ़ कुर्ता, धोती पहने प्रवेश करता है। राधेमोहन जीना उतरते समय धोती के निचले छोर को एकहाथ से संभाले है। दूसरे हाथ में एक किताब थमी है। किताब के पन्नों में दबी उंगली से प्रतीत होता है कि वह किताब पढ़ते-पढ़ते पुकार सुन-कर उतर आया है। युवक के कुर्ते में खोंसा फ़ाउन्टेनपेन, उसकी आंखों पर नये ढंग के काले मोटे फ्रेम के चश्मे और सिर के बालों की काट से कालेज की शिक्षा का आभास मिलता है। राधेमोहन चेहरे से लगभग बाइस वर्ष का सरल तथा भावुक व्यक्ति जान पड़ता है।)

रा० मो०—(जीने से दुकान में कदम रखते हुये, भौं चढ़ा कर) क्या है काका? क्यों पुकार रहे हो बार बार? कौन आया था?

छि० का०—(उपेक्षा में हाथ हिला कर) आये थे तुम्हारे नन्दलाल बाबू और जीवन भैया।

रा० मो०—(प्रश्नात्मक मुद्रा में त्योरियां डाल.) तो फिर?

छि० का०—(उपेक्षा से हाथ हिलाकर) अरे हमने उन को रास्ता दिखा दिया। (सड़क की ओर संकेत कर देता है) कह दिया, बाबू सो रहे हैं।

रा० मो०—(क्रोध प्रकट कर) छिद्दू-काका, यह तुम बड़ी ज्यादती करते हो, उन्हें कोई ज़रूरी काम रहा हो तो?

छि० का०—(उपेक्षा से दूसरा हाथ हिला कर) हमें मालूम है उन का काम। आये बड़े काम वाले। (समझाने के लिये नवयुवक की ओर हाथ उठा कर) यही समझायेंगे, लाइसेंस से इस्तेफ़ा दे दो। सरकार सराब बन्द कर रही है। तुम भी अपनी दुकान छोड़ दो! (हाथ से दुकान के बाहर संकेत कर) और अभी फिर आते होंगे। पड़ोस में गिरजा बाबू के ही तो गये हैं।

रा० मो०—(माथे की त्योरियां गहरी करते हुये) वे चले गये थे तो फिर हमें क्यों पुकारा?

छि० का०—(विस्मय प्रकट करने के लिये हाथ फैला कर) क्यों पुकारा? अरे भैया, दुकान के मालिक हो, दुकान पर बैठोगे नहीं?........कल होली है। बरस दिन की बिकरी का बखत है। ऐसे बखत मालिक को दुकान पर रहना चाहिये छोटे बाबू! मालिक फिर मालिक है! मालिक दुकान पर बैठे, हम घर का दूसरा काम काज देखें।

रा० मो०—(उलझन में) हो जायेंगे घर के काम। तुम अच्छे भले बैठे तो थे। खामुखा हमें बुला लिया।

छि० का०—(समझाने के ढंग से छोटे बाबू की ओर हाथ बढ़ाकर) छोटे बाबू, ऐसा नहीं करते। दुकान और गाहक मालिक का मुंह देखते हैं। बड़े मालिक नित्त-नेम से दुकान पे बैठते रहे तो कारोबार पनपा, फूला और फला। तुम तो छोटे बाबू दुकान से ऐसे कतराते हो जैसे कोई सरीके में खुशी देख कर उदास हो।

रा० मो०—(झमक कर) अच्छे भले बैठते तो हैं। अब यहीं गड़े रहें क्या दिन भर? (जंगले का दरवाज़ा खोल असंतोष में ज़ोर से पांव पटकता हुआ दुकान की गद्दी पर जा बैठता है और तुरन्त पुस्तक खोल पढने में रत हो जाता है।)

छि० का०—(पुस्तक में ध्यान लगाये छोटे बाबू की ओर देख कर समझाने के स्वर में) बाबू यह दुकान है तो सब कुछ है। बड़े कह गये हैं, खेत और बनज संदेशों से नहीं चलते।

(राधेमोहन को पुस्तक में तन्मय और उत्तर न देते देखकर छिद्दू-काका जंगले के बाहर पड़ी खाली बोतलों की ओर देखता है और फिर राधे मोहन को पुकारता है।)

छोटे बाबू यह खाली बोतलें पड़ी हैं यहाँ। कहो, तो कोठे पर पहुँचा दें ......कहो यहाँ ही करीने से लगा दें।

(उत्तर के लिये क्षण भर पुस्तक में रत राधेमोहन की ओर देख विरक्ति से हाथ हिलाते हुये बोतलों के समीप बैठ उन्हें करीने से सजाने लगता है। कुछ याद आने पर फिर घूम कर छोटे बाबू की ओर देख पुकारता है)

छि० का०—छोटे बाबू, आज कोई मेहमान नहीं आने वाले?

रा० मो०—(उद्विग्नता से उसकी ओर देख) छिद्दू-काका पढ़ने नहीं दोगे? मेहमान का हमें मालूम होता तो खुद नहीं कह देते? अब तुम ऊपर क्यों नहीं जाते?

छि० का०—(बोतलों को करीने से रखते हुये) जाते हैं बाबू, जाते हैं। हम तो आप ही जा रहे हैं। तुम्हारी ही राह देख रहे थे। बाबू मुडेरे पर काग बोल रहा था। इस से कहा पूछ देखें!

(गाहक कामता "ऐ बाबू....ऐ बाबू" पुकारता दुकान में आता है। कामता की चाल से प्रकट होता है कि शिथिलता के कारण उस के अंग झोल खा रहे हैं। वह एक मैली धोती घुटने तक और कबाड़ी के यहां से खरीदा, कई जगह से मरम्मत किया हुआ एक चिथड़ा सा कोट पहने है। कुरता न होने के कारण कोट में से उसके सीने के बाल दिखाई दे रहे हैं। सिर पर पट्ठेदार काली टोपी है। टोपी के भीतर का पट्ठा टूटकर दब गई है। टोपी के नीचे के किनारे पर चिकनाई और गर्द जमी है। कामता के चेहरे पर बढ़ी हुई हजामत असंयम और लोकमत की उपेक्षा का प्रमाण है। सिर और दाढ़ी-मूंछ के काले बालों के कारण उसकी आयु तीस पैंतीस और चेहरे पर छायी शिथिलता और पलकों के नीचे फूले हुए मांस के कारण पचास-पचपन बरस तक कुछ भी समझी जा सकती है। कामता की पुकार सुन कर राधे-मोहन और छिद्दू-काका प्रश्नात्मक दृष्टि से उसकी ओर देखते हैं।

कामता—(दीनता से गरदन बायीं ओर कंधे पर झुकाये हाथ जोड़ कर गिड़गिड़ाता हुआ) ऐ बाबू! आज निरास न करो!

छि० का०—(बैठे ही बैठे कामता की ओर घूम कर स्वागत के स्वर में) कहो भैया कामता, होली कैसी जम रही है!

कामता—(छिद्दू-काका को उत्तर देने के लिये अनुत्साह से हाथ हिलाकर) अरे छिद्दू-काका, अब क्या जामेगी होली? तुम जानो होली जब जमती थी, तब जमती थी।

रा० मो०—(हाथ की किताब को डेस्क के कोने पर रखते हुये दृढ़ता प्रकट करने के लिये गर्दन सीधी कर तरजनी से चेतावनी देते हुये) कामता, हमने तुम से एक बार नहीं बीस बार कह

दिया, भलमनसाहत भले ही आदमी से निभती है। पिछला उधार जब तक नहीं दे जाओगे, हम कुछ नहीं देंगे। अरे उधार तो हम देंगे ही नहीं! (दूर हटाने के संकेत में हाथ छिटकाता है)

छि॰ का॰—(मालिक के समर्थन में) भैया कामता, उधार का भी तो कोई कायदा होता है। पल्ले से तुम्हें उधार दें, फिर तुम से झगड़ा करके बुरे बनें! उधार माँगने तो लाला तुम यहां आ गये और तकादा करने जायेंगे हम तुम्हारे घर?

कामता—(छिद्दू की ओर मिन्नत में हाथ जोड़ कर) अरे छिद्दू-काका, ऐसी न कहो। बखत की बात होती है काका! (राधे मोहन की ओर खुशामद से हाथ बढ़ा कर) मालिक, आज ऐसी जरूरत न होती तो हम आते थोड़े ही! बड़ी लाचारी का मामला है। छोटे बाबू, तुम जानो हम कभी झूठ थोड़े ही बोलते हैं। गंगा जी की कसम मालिक, बड़ी लाचारी का मामला है।

छि॰ का॰—(हाथ उठा कर) लाचारी तो है ही सो कौन नहीं जानता? होली का मामला है। तुम अपना उधार चुका जाओ, अपनी चीज ले जाओ, बस और क्या!

कामता—(खुशामद में झुक कर) छिद्दू-काका, तुम जानो हमें तो पहले उधार की आप ही बड़ी सरम मालूम हो रही है। तुम जानो हम कभी ऐसे उधार रखते थोड़े ही हैं। काका, यह तो लाचारी का मामला है। (छोटे बाबू को सम्बोधन कर) मालिक, जो ऐसी लाचारी न होती तो यों आते थोड़े ही। आज ऐसे बखत मालिक का ही आसरा होता है बाबू!

रा० मो०—(फटकार बताने के लिये हाथ की उंगलियां छिटकाकर क्रोध से) लाचारी है! क्या लाचारी है? एक सांझ होश में रह जाओगे तो क्या बिगड़ जायगा? कौन अनर्थ हो जायगा? (मुंह मोड़ कर पुस्तक उठा पढ़ने का उपक्रम करता है)

कामता—(छोटे बाबू की ठोड़ी की ओर हाथ बढ़ा और गिड़गिड़ाकर) अरे बाबू, गंगा जी की कसम, बहुत ही लाचारी का मामला है। नहीं, तुम जानो हम ऐसे आते ही नहीं आज। (झुककर छोटे बाबू के पांव की ओर हाथ बढ़ाता है।)

रा० मो०—(उलझन प्रकट करने के लिये पुस्तक को डेस्क पर पटक, अधिक ऊंचे स्वर में झुंझलाकर) अरे हम पूछते हैं, क्या लाचारी है? कौन तुम्हारे पेट में मरोड़ उठ रहे हैं कि सिर में दर्द हो रहा है और यह कोई दवाई है क्या कि ज़रूर पीनी होगी? और फिर चंगे होकर उधार चुकाने आओगे?

कामता—(दीनता और व्याकुलता प्रकट करने के लिये अपने पांवों पर बोझ बदलते हुए और भी अधिक गिड़गिड़ा कर) अरे बाबू, गंगाजी की कसम, ऐसी ही लाचारी का मामला है। मालिक तुम जानो बीमारी से बढ़ कर लाचारी का मामला है बाबू। (सहसा चुनौती के स्वर में) कल तुम्हारा उधार न चुकता कर दें तो अपने बाप की औलाद नहीं। (मूंछ पर हाथ फेरता है और फिर राधेमोहन की ठोढ़ी की ओर हाथ बढ़ाता है)……हां छोटे बाबू!

रा० मो०—(कामता का हाथ परे हटाते हुए) हटो जी, देख ली तुम्हारी कसम। सिर न खाओ। एक बार कह दिया, सौ बार कह दिया। (फिर पुस्तक उठाकर खोलने लगता है।)

कामता—(छिद्दू-काका की ओर घूमकर गिड़गिड़ाता है) छिद्दू-काका !

छि० का०—(बैठे ही बैठे परेशानी में हाथ फैला) कामता, तुम्हारे लिये कौन बोले ? पहली बोतल ले गये थे तो कौन कसम नहीं खायी थी तुमने ? दूसरी बोतल उधार मांगने आये तो खायी हुई कसमें फिर से खा गये ! हम पूछते हैं, अब कौन कसम बाकी है जो फिर खा रहे हो ?

कामता—(खुशामद के लिये जंगले पर झुक कर अनुरोध करता है) मालिक....! (परन्तु पीछे आहट सुन झिझक कर चुप रह जाता है। एक दूसरा गाहक किसनलाल आता है। किसनलाल कारखाने में माहवार तनखा पाने वाले अच्छे मज़दूर की स्थिति का जान पड़ता है।)

कि० ला०—(कामता की ओर उपेक्षा से देख दस रुपये का नोट राधेमोहन की ओर बढ़ाता है) बाबू, एक संतरा तो दिलवा दो।

छि० का०—(अपने स्थान से उठता हुआ) अरे किसनलाल बाबू जैरामजी की। बड़े दिनों में दिखायी दिये बाबू ?

कि० ला०—जैरामजी की छिद्दू-काका। अरे भैया होली का मौका है। हम ने कहा एक ला कर घर में रख लें। दद्दा, मिलने-जुलने वाले आ जाते हैं न, उन्हें किस मुंह से न पिलायें ?

छि० का०—(समर्थन में) सो तो है ही भैया, होली का मौका ठहरा। बाबू, तुम्हारे घर ही नहीं आयेगी तो क्या साले भुक्कड़ पियेंगे इसे ? सरीफ़ खानदान-लोगों की तो यह चीज ही है। वो तो साले भंगेड़ी है बाबू, जो भांग पी कर पड़े रहते हैं।

छि० का०—(अपनी बात कहता-कहता जंगले के किवाड़ खोल भीतर जा बोतल ला कर किसनलाल को थमा देता है। किसनलाल

बोतल लेकर चल देता है। कामता उसके हाथ में थमी बोतल को तृषित आँखों से देख बेबसी में होंठ चाट अपने आपको रोके रहता है।)

कामता—(राधेमोहन की ओर जंगले पर झुक कर) मालिक……!

रा० मो०—(क्रोध में पुस्तक पटक झुंझलाकर) कामता तुम परेशान कर देते हो। मुहल्ले भर में जाकर पूछ लो जो हम किसी को कभी उधार देते हों ? तुम्हारा जितना खयाल करते हैं, उतना ही तुम परेशान करते हो

छि० का०—(कामता से) तुम बड़े मालिक के बखत के गाहक हो, इससे छोटे बाबू तुम्हारा इतना लिहाज करते हैं और तुम लिहाज़ मिटा देने की कसम खाये बैठे हो। भैया, तुम्हें उधार दिलायें तो दूसरे को किस मुँह से इनकार कर दें,……बोलो ?

कामता—(छिद्दू-काका की ओर मुड़ कर) अरे काका, तो हम किसी से जाकर कहते हैं कि उधार लिया। कोई हमारे सामने आकर कह दे कि हमने किसी से कहा हो कि हमने उधार लिया। काका यह तो आपस की बात है।

रा० मो०—(झुँझलाहट से पुस्तक बन्द करते हुए) अरे, और कौन कहेगा ? तुम्हें उधार देते हैं तो तुम्हारी घरवाली ही आकर खरी-खोटी सुना जाती है। एक तो पल्ले का उधार दो, दूसरे गालियाँ सुनो। तुम्हारी औकात नहीं है तो क्यों पीने मरने आते हो !

छि० का०—(हाथ फैलाकर) और क्या भैया ? उस महीना बन्द पर तुमने पिछले दिये। खाली हाथ घर पहुँचे होगे। जानते हो, तुम्हारी घरवाली यहाँ आ कर कैसी रार मचा गई ? (समझाने की मुद्रा में हाथ उठा कर) भैया,

आदमी हाथ में रकम पाता है तो गाली भी सह जाता है। दुधारी गाय की ही लातें सही जाती हैं। तुम्हें पल्ले का कर्ज में दो, सूद में गाली सुनो।

कामता—(छिद्दू-काका की उपेक्षा कर खुशामद में राधेमोहन की ठोड़ी छूने के लिए हाथ बढ़ा कर बहुत ही विनीत स्वर में) बाबू, ऐसी बातें न करो। मालिक कभी तुम्हारा उधार रुका हो तो बताओ ? (अभिमान में गरदन ऊँची कर लेता है) आज दस बरस से सिवाय इस ठेके के और कहीं कदम रक्खा हो तो कोई कह दे ? (छिद्दू-काका की ओर घूमकर) तुम्हीं कह दो छिद्दू-काका, हां ! (चुनौती की मुद्रा में बाँह फैलाता है ।)

छि० का०—(अनुमोदन में सिर हिलाते हुए) सो तो भैया, यह तुम्हारी अपनी दुकान है। कबूतर अपने ठिये पर ही बैठता है। द्वार-द्वार घूमना कोई इज्जतदार आदमी का काम है ?

कामता—(छिद्दू-काका का समर्थन पा कर अभिमान और अधिकार की भावना प्रकट करने के लिए गरदन उठाकर) और क्या छिद्दू-काका, और क्या ? हम कहते हैं किसी ने हमें दूसरे ठेके पर कभी देखा हो तो दस जूते हमारे सिर पर मार लो। (सिर से टोपी उतार हाथ में ले सिर झुका देता है और राधेमोहन की ओर घूम जाता है) बाबू, अपने तो साहूकार को ऐसे समझते हैं जैसे जजमान तीरथ के पन्डे को। दूसरी जगह जायँ, अपनी आकबत बिगाड़ें ? जब तक जिन्दा हैं, तुम्हारे ही द्वारे इज्जत बनी रहे। और क्या ? तुम्हीं कहो, छिद्दू-काका ?

छि० का०—(समर्थन में सिर हिलाकर) सो तो है ही। सो तो है ही। ठीक ही कह रहे हो। भले मानुसों का यही तरीका है भैया ? साहू और खसम कहीं बदले जाते हैं ?

कामता—(राधेमोहन की ठोड़ी छूने के लिये दुबारा हाथ बढ़ाते हुये) मालिक रुपया तुम्हारा मारा नहीं जा सकता। तुम्हारे उधार को तो हम ऐसा जानते हैं, जैसे गाय का खून !

रा० मो०—(मुँ फलाइट से कामता का हाथ परे हटाते हुए) कामता, सौ बेर कह दिया हमने तुमसे, उधार नहीं देंगे ? तुम्हें उधार मिलता हो तो जहाँ मिले, ले लो !

कामता—(फिर राधेमोहन की ठोड़ी की ओर हाथ बढ़ाकर पहले से अधिक गिड़गिड़ा कर) बाबू, ऐसी बेरुखी मत दिखाओ। साहूकार और गाहक का रिस्ता ऐसा नहीं होता बाबू ! हम तो दूसरे के द्वारे जाना ऐसा समझते हैं जैसे औरत अपने मरद को छोड़ दूसरे के यहाँ जा बैठे।

छि० का०—(अपने घुटनों को कौली में बाँधे समर्थन में अपने पूरे शरीर को झुलाते हुए) सच कहते हो भैया कामता, तुम भी सच कह रहे हो।

कामता—(उत्साहित हो छिद्दू-काका के समर्थन की आशा में दोनों की ओर बारी-बारी से देखता हुआ) भैया, इज्जत का सवाल है। दो मेहमानों को घर बैठा कर आया हूं। समझे ! नहीं तो ऐसे आते थोड़े ही। हमें तो पहिले उधार की खुद ही बहुत सरम·······(किसी के आने की आहट पा कर कामता चुप हो जाता है। तीसरा गाहक बद्री आता है। उसके कदम नशे के प्रभाव से कुछ शिथिल हैं। वह झूमते हुए शिथिल स्वर में गा रहा है "काहे मटकावे नैन ठगनी")

कामता—(बद्री की ओर घूम कर) कहो बद्री महतो, कैसे रंग जम रहे हैं ?

बद्री—(कामता की उपेक्षा कर गम्भीर हो जाता है) जैरामजी की राधेबाबू (अंटी से पैसे निकालते हुए कामता की ओर घूमकर)

हाँ, कामता भैया, (पहचान कर सम्मान में माथे पर हाथ लगा कर) जैराम जी की भैया, जम नहीं रहा तो क्या तुम्हारी दुआ से (मूँछ पर हाथ फेरता हुआ) दूसरी लिए जा रहे हैं।

कामता—(ईर्षापूर्ण विस्मय से) दूसरी लिए जा रहे हो ?

बद्री—(छिद्-काका को सम्बोधन कर) छिद्-काका, एक महुआ तो और दिला दो। तुम जानते हो, काका कल होली है न।

छि० का०—(अपने स्थान से उठता हुआ) अरे मालिक कौन नहीं जानता होली है। आज ही तो बखत है इस चीज का। (बोतल निकालने के लिए जँगले के भीतर चला जाता है)

बद्री—(कामता की ओर देख फिर मूछों पर हाथ फेर हँसते हुए) भैया जग्गू, गफ़ूर, माधो सब आये हुए हैं। दूसरी लिए जा रहा हूँ। गफ़ूर साला एक अद्धा साथ लिये आया है। हमने कहा, साले बड़े धन्ना सेठ के नाती बनते हो ? हमारे दरवाज़े पर साथ लेकर आये हो ? हमें रईसी दिखाने चले ! (हंसकर) देखे तो भला ! हमने तो सारी दौलत इसी में फूंक दी। हमें क्या सेखी दिखाओगे ? (कुछ सोच कर) तुम क्या अभी आ रहे हो ?

कामता—(सिर घुमाते हुए हकला कर काँपते स्वर में) दूसरी लिए जा रहे हो ? हम तो बस अभी लगे आ रहे हैं।

बद्री—(छिद्दू काका से बोतल लेकर अंगोछे में लपेटते हुये) तो आओ, हमारे यहाँ आओ।

कामता—(शिथिल स्वर में) तुम्हारे यहाँ ? (चलने के लिये कदम उठाता है परन्तु रुक जाता है) तुम जानो हमारे यहाँ मेहमान बैठे हैं भैया। तुम चलो। (घूँट सा भर कर कदम पीछे हटा लेता है। बद्री के चले जाने के बाद) बेटा, तुम

पियो महुआ, साले रईस बनते हैं और महुआ पीते हैं। कहो छिद्दू-काका ? अरे हम तो संतरा पीने वाले हैं।

छि०-का०—(समझौते के स्वर में सिर हिलाते हुये) तो भैया कामता ऐसा करो, पिछला तो तुम कैसे ही चुकता कर दो। तब तो बाबू भी कुछ खयाल करें।

कामता—(आशा से उत्साहित होकर) छिद्दू-काका, तो हम कब इनकार कर रहे हैं ? तुम जानो, बस बोतल लेकर मेहमानों को थमा आयें और तुम्हारा नामा लिए आते हैं ! बस तुम जानो, सर्राफे तक जाने की देर है काका ! तुम उधार नहीं मानते, तो ऐसे ही सही। हम उधार थोड़े माग रहे हैं ?

रा० मो०—(पुस्तक से आँख उठाकर) अरे हाँ, अभी कौन दम निकला जा रहा है ? जाओ ले आओ नामा ! कौन जवाहरात रखे हैं तुम्हारे घरपर कि सर्राफे से थैली ले आओगे ?

कामता—(भृकुटिया कर चेतावनी में तर्जनी दिखाते हुये) ऐसी बात न कहो बाबू ! दस बरस से तुम्हारी दुकान न भर रहे होते तो जवाहर भी हो जाते। हाँ, अपने तो इस चीज के आगे जवाहर को मिट्टी समझते हैं। (छिद्दू काका की ओर देख कर) कहो छिद्दू-काका, जवाहर न सही अपनी इज्जत तो रख सकते हैं ? (राधेमोहन की ओर घूमकर) ऐसी बेइतबारी न करो मालिक !

छि०-का०—(बैठे ही बैठे अपने स्वर को जरा कोमल करके) क्या बेचने जा रहे हो सर्राफे में ?

कामना—(अपने कोट के भीतर की जेब में हाथ डालते हुए) अरे, तो सर्राफे में क्या जायें, तुम्हीं न रख लो ? तुम्हीं को देकर छुड़ा लेंगे। सूद दूसरे के घर क्यों जाये ? अपने

मालिक के घर पर ही रहे। (जेब से रुपयों की माला दिखाते हुए) यह लो, मालिक तुम्हीं रख लो।

छि०-का०—(कौतूहल से माला को देखने के लिये आगे आकर) तुम्हारे घर की है क्या ? (माला हाथ में ले लेता है)

कामता—(अभिमान से) तो और नहीं तो क्या ? देखते हो रानी की असली चाँदी है। आज दिन तो दूने में जा रही है। यह रुपया मिलता कहां है अब ?

छि०-का०—(माला को हाथ में तोलते हुये) कित्ते की होगी ?

कामता —(अभिमान में गरदन ऊँची कर और हाथ फैलाकर) अरे कम से कम होगी तो तीस-पैंतीस रुपये की। (माला छिद्द के हाथ से ले राधेमोहन की ओर बढ़ाते हुए) लो मालिक, पिछले नौ और आज के पाँच दे जायं तो लौटा देना।

रा० मो०—(इन्कार में हाथ झटकाते हुए) ना, ना। यह बला हमारे सिर मत डालो। यह साहूकारा हमारे बस का नहीं। इसके तीस पैंतीस तुम्हें जहाँ मिलते हों ले आओ। हमारा नामा चुका कर अपनी चीज़ ले जाओ।

कामता—(आग्रह से गरदन टेढ़ी कर) अब ऐसी बातें न करो मालिक ! तुम्हारी जवानी की कसम बाबू, घर में मेहमान बैठे ह। इज्जत का सवाल है। सर्राफे तक तुम जानो, क्यों दौड़ाओगे ? कहीं मेहमान समझ बैठे कि मूआ बैठा कर भाग निकला। (छिद्दू-काका की ओर घूम कर) और क्या काका, बनी बनाई इज्जत चली जाय। अरे हाँ, इज्जत और धरम बिगड़ते लगता क्या है ?

रा० मो०—(उलझन दिखाते हुए) भैया, इसे तौलना, दाम आंकना हमारे बस का नहीं। जो लोग यह काम करते हैं, उन्हीं के यहां ले जाओ। वही देंगे तीस-पैंतीस इसके तम्हें।

कामता—आग्रह में जंगले पर झुक कर) मालिक, तुमसे तीस-पैंतीस कौन मांग रहा है? हमारा इस बखत का का काम निकल जाय। फिर अपनी चीज अपने घर ले जायेंगे। कोई बेचने की चीज थोड़े ही है। तुम जानों, इस जमाने में बनाये न बने।

रा० मो०—(इन्कार में हाथ हिलाते हुए) ना, ना भैया ! यह साहूकारा हमारे बस का नहीं।

कामता—(सहायता के लिए छिद्दू की ओर देख शिकायत के स्वर में) अब देखो छिद्दू-काका, मालिक की बातें !

छि० का०—(सिफ़ारिश में) छोटे बाबू, अब बात रख लो कामता की।

रा० मो०—(उलझन में छिद्दू काका को संबोधन कर) काका तुम भी मुसीबत गले मढ़ देते हो ! (विवशता में माला हाथ में लेते हुए) तो कब छुड़ाओगे इसे ?

कामता—(उत्साह से) अरे, बस इसी तनखा पर मालिक ! (हाथ से निश्चिंत रहने का संकेत करते हुए) होली के बाद, महीना बन्द होते ही जो तनखा मिली तो पहले मालिक तुम्हें सलामी देकर तब घर जायेंगे।

(राधेमोहन माला डेस्क में बन्द कर फिर पुस्तक उठा लेता है।)

छि० का०—(छिद्दू काका जंगले के भीतर जा अलमारी में से नारंगी रंग की एक बोतल निकालते हुए कामता को समझाता जाता है) कामता भैया देखो ! हम झूठे न पड़ें, हां ! तुम बड़े मालिक के बखत के गाहक हो, इससे तुम्हें इनकार भी नहीं करते बनता। (बोतल कामता को थमा देता है।)

कामता—(आँखें प्रसन्नता से चमक उठती हैं। गद्गद् स्वर में) बड़े होसियार हो काका। कैसे याद रखते हो गाहक को कि हम सन्तरा पीते हैं ! (बांह उठा कर) संतरे से नीचे

हमने कभी पी ही नहीं। क्यों काका ? आदमी पहनने, ओढ़ने में कसर कर ले पर सराब बढ़िया पीये। (गदगद स्वर में हँस कर) हमने कभी संतरे से कम छुई हो तो कोई कह दे ? हाँ काका ! कसम गंगाजी की। (बोतल कोट के भीतर बगल में छिपा कर कामता उत्साह से दुकान से उतर कर बायीं ओर को चला जाता है। राधेमोहन फिर पुस्तक पढ़ने लगता है ।)

छि० का०—(राधेमोहन की ओर बढ़ते हुये रहस्य के स्वर में) मालिक, माला चालीस से कम की नहीं होगी इस जमाने में।

रा० मो०—(पुस्तक से आखें हटाये बिना) तो अपने को इससे क्या ?

छि० का०—(एक कदम राधेमोहन की ओर बढ़, हाथ उठा कर समझाते हुये) इस से क्या ?···वाह, अब वह छुड़ा थोड़े ही सकेगा इसे !

रा० मो०—(पुस्तक से ध्यान हटाकर) तो फिर तुमने हम से रख लेने को कहा क्यों ?

छि० का०—(परेशानी अनुभव करते हुये) तुम तो छोटे बाबू कुछ नहीं समझते। नसा करने के लिये जो उधार लेगा, कभी उधार चुका पायेगा ? यह तो ऐसा ही कीच है। बाबू, इसमें रपटा तो रपटता ही चला गया।

रा० मो०—(झुंझलाहट में छिद्दू की ओर करवट लेकर) जानते थे तो फिर तुमने हमसे रख लेने को कहा क्यों ?

छि० का०—(विस्मय में हाथ उठाकर) कैसी बातें करते हो बाबू ? घर आती माया नहीं रखोगे ? बड़े मालिक ऐसा करते तो यह घर-जायदाद कैसे बनती ? बड़े मालिक बड़े होसियार थे। जानते हो, नकद के बजाय जेवर गिरवी रख कर ही नसा बेचते थे। इसी से तो बाबू ग्राहक

पक्का होता है। (रुपया खनकाने का संकेत करते हुये) और दूना नामा पड़ता है। एक बिक्री का और फिर सूद का।

रा० मो०—(वितृष्णा से ध्यान पुस्तक की ओर करते हुए) हटो छिद्दू काका, यह सब ढंग हमें अच्छे नहीं लगते। तभी तो लोग नाम धरते हैं और गालियां देते हैं।

(दुकान की दायीं ओर से कामता की बहू परेशान हालत में मोटी, मैली सी धोती और फटी-फटाई कुर्ती पहने, एक मैले-कुचैले अधनंगे बच्चे को गोदी में उठाये दुकान में प्रवेश करती है। वह तीन-चार बच्चों की मां जान पड़ती है। चेहरे पर भूख, निराशा और कठोर परिश्रम की रुखाई छायी हुई है। दुकान में कदम रखते ही सिर का पल्ला माथे पर खींचती हुई रुखे स्वर में राधेमोहन को संबोधन करती है)

का० ब०—यहां आया था?

(राधेमोहन पुस्तक से आंख उठा कामता की बहू की ओर देखते हुये निश्चल रह जाता है)

छि० का०—(विस्मय और विरोध के स्वर में डांट कर) कौन आया?

का० ब०—(अधीरता में आवाज़ ऊंची कर) चुन्नू का बप्पा नहीं आया?

रा० मो०—(पुस्तक बंद करते हुए प्रश्नात्मक दृष्टि से) कौन? क्या नाम?

का० ब०—(झमक कर) बड़े आये?....क्या नाम? मेहरारू कहीं मर्द का नाम लेती हैं?

रा० मो०—(निष्प्रभ होकर) क्यों?....बात क्या है?........किस लिये आया?

का० ब०—(कमर से खिसकते बच्चे को ऊपर उचका कर) किस लिये आया? कैसे बन रहे हैं? मेरी माला चुरा लाया और क्या? (राधेमोहन को चुप देख कर और ऊंचे स्वर में दुहाई

सी देती है) मुआ सूंघता फिर रहा था। कह रहा था, पंजाबी का देना है। माला गिरवी रखने को दे दे।

छि० का०—(विस्मय प्रकट करने की मुद्रा में कामता की बहू को संबोधन कर) तेरी माला चुरा लाया?....कैसे चुरा लाया तेरी माला? तूने ही दी होगी।

का० ब०—(विरोध प्रकट करने के लिये फुंफलाकर) मैंने कब दी? मैं क्या करूँ? कित्ती चीजें तो मैंने उतार-उतार कर दे दीं। मुआ जो पाता है, पी डालता है। पीकर धत्त हो जाता है तो हाड़-गोड़ ऊपर से तोड़ता है। (राधेमोहन की ओर घूम कर) बाबू, मेरी माला दे दो। मैं नहीं जानती।

रा० मो०—(बेपरवाही ही दिखाकर) हमें तेरी माला से क्या मतलब? तुझे जो कहना है, जाकर अपने मर्द से कह!

का० ब०—(राधेमोहन की ओर हाथ बढ़ा कर) वाह रे? मेरी माला तुम्हारे यहां है तो तुमसे कहूँगी। (हाथ मटका कर) उस मुए से क्या कहूँ? दोनों बच्चे सुबह से भूखे हैं। मैंने माला रख दी थी कि यह मुआ जायगा तो बनिये के यहां रख कर आटा, चावल, तेल ले आऊंगी।

छि० का०—(आगे बढ़ कर) अरे तो तूने जहां माला रखी है वहां ढूंड। अपने घर में जाकर देख।

का० ब०—(तिनक कर) वाह रे! बड़े आये सिखाने वाले। वह घर से निकला तो मैंने अलगनी पर पिछौरी के नीचे माला के लिये हाथ डाला तो माला थी ही नहीं। मैं पल भर को पिछवाड़े गयी थी। इत्ते में नासपीटा ले भागा। जरूर यहीं दे गया है। (खिसकते हुये बच्चे को कमर पर उचका कर राधेमोहन की ओर घूमकर) लौटाते हो कि नहीं गहना मेरा?

रा० मो०—(झेंप कर औरत से आंखें बचाने के लिये पुस्तक के पन्ने पलटते हुये) हम क्या जानें ?...हमारा उधार था।....हमने तो उधार लिया है। (बेपरवाही दिखाने के लिये तकिये का सहारा लेते हुए) तुम्हारा मर्द जाने, तुम जानो।

का० व०—(खिसकते हुये बच्चे को संभालती हुई स्वर ऊचा करके) कैसी बातें करते हो बाबू ? (चुनौती में हाथ फैलाकर) तुम इत्ता भी नहीं जानोगे कि गहना औरत की चीज है ? बड़े मुंशी-इलमदार बनते हैं। (दुबारा हाथ बढ़ाकर) बच्चे भूखें मरें और तुम हमारे गहने से मुये को सराब पिलाओ !......देओ हमारा गहना निकाल कर।

छि० का०—(स्त्री की ओर एक कदम बढ़ समझाने के लिये हाथ उठाकर) अरे.......

रा० मो०—(छिद्दू को टोक कर स्त्री से आंखें चुराते हुये) तुम्हें जो कहना है, अपने मर्द से कहो जाकर। हम कुछ नहीं जानते।

छि० का०—हां, ठीक तो है। (स्त्री को धमकाने के लिये हाथ से परे हटने का इशारा करते हुये) हटो यहाँ से ! तुम्हारा मर्द औरत का झगड़ा है, हम लोग क्या जानें ? हमने कोई खैरात तो ले नहीं ली ! महीना दिन राह देखी है। उधार के लिये तब आकर दे गया है।

का० व०—(बांह फैलाकर ऊंचे स्वर में दुहाई देती हुई) हाय राम, कैसी बातें करते हो बाबू ? तुम नहीं जानते गहना औरत की चीज है ? कोई किसी का माल चुरा कर तुम्हारे यहां दे आयगा तो तुम दबा लोगे ?

(राधेमोहन के दो परिचित नन्दलाल बाबू और जीवन दुकान के सामने आ औरत की पुकार सुन ठिठकते हैं और फिर भीतर आ जाते हैं। नन्दलाल खद्दर का कुर्ता-पायजामा पहने सिर पर मशीन की हजामत है। नाक पर

ढलका हुआ चश्मा और हाथ में मोटी छड़ी। जीवन खद्दर की कमीज पतलून पहने है।)

नन्दलाल—(विस्मय से) क्या हुआ राधे भाई ?

जीवन—क्या झगड़ा है ?

रा० मो०—(परिचितों को देख उत्तेजना में तख्त पर खड़ा हो जाता है और स्त्री की ओर संकेत कर उन्हें उत्तर देता है) देखिये तो बाबूजी, यह हमें चोरी लगा रही है। (स्त्री की ओर घूम) हम तुम्हारे घर गये थे तुम्हारा गहना उठाने? तुम्हारा आदमी कर्जे में अपने घर की चीज दे गया है।........ तुम्हारा औरत-मर्द का झगड़ा है। (समर्थन की आशा में आगुन्तकों की ओर देख स्त्री से) तुम अपने मर्द से निपटो!

का० ब०—(आंखों से बहते आंसुओं की परवाह न कर गोद के बच्चे को संभालती हुई अधिक ऊँचे स्वर में) कैसी बातें करते हो बाबू? बच्चे भूख से बिलख रहे हैं। उनके मुंह में दाना नहीं गया। बच्चों का पेट भरने के लिए हमने गहना उतारा तो उससे तुम उस मुए को सराब पिलाओगे?

छि० का०—(स्त्री को ओर बढ़कर) निकल यहां से। (सड़क की ओर संकेत करता है) तू अपना गहना अपने मर्द से मांग। तुझे हम लोगों से क्या मतलब ?

रा० मो०—(प्रश्न की मुद्रा में हाथ उठाकर) हमने तेरे मर्द से गहना मांगा था जाकर ?

का० ब०—(हाथ फैलाकर) माँगने नहीं गये तो और क्या? सराब के उधार में तुमने हमारा गहना लिया क्यों? (दुहाई देने के लिए हाथ फैलाये आगुन्तकों की ओर देख पुकारती है) क्या गाज पड़ गई जमाने पर! दूसरों का घर फूँक कर (राधेमोहन की ओर संकेतकर) कमाई कर रहे हैं। सरम नहीं आती। बड़े कर्जा लेने वाले बने हैं।

छि०का०—(स्त्री को डराने के लिए विस्मय प्रकट करके) देखो, देखो, देखो कैसी मुंहजोर औरत है ! (धमकाने के लिए एक कदम आगे बढ़कर) तेरा मर्द अपना कर्जा नहीं देगा ?…बोल ?

का० ब०—(धमकी से न दब उपेक्षा हाथ में मटका कर) बड़े कर्जा लेने वाले आये। कर्जे में सराब पिलाकर दूसरों को बरबाद करते हैं। गरीब की सारी कमाई धरा कर जहर पिलाते हैं। सरम नहीं आती ? (धोती का पल्ला आँखों पर रख रो पड़ती है) हाय हमारा गहना छीन लिया (विलाप में चिल्लाकर) हाय रामजी नास हो इनका।

नंदलाल—(फ़र्श पर छड़ी खटखटाते हुए) अरे भई, बात क्या है ? कैसा गहना ? कैसा कर्ज़ा ?

रा० मो०—(कुछ संकोच से) देखिये बाबूजी, इसका मर्द उधार ले गया था। उधार में घर की चीज दे गया तो इसमें हमने क्या जुल्म किया ? आप ही बताइये ?

छि० का०—(उत्तेजना में बाहें हिलाते हुए स्त्री को सम्बोधन कर) वो रुपया दे जाय, अपनी चीज ले जाय। (स्त्री की ओर एक कदम बढ़ कर) तुम दे जाओ, तुम ले जाओ। तेरे बच्चे भूखे हैं तो हम क्या करें ? अपने घर की बात तुम मर्द-औरत जानो। यहाँ कर्जा ही तो लिया है… …कुछ लूट नहीं लिया।

का० ब०—(बच्चे को सम्भालती हुई एक कदम आगे बढ़ कर) लूट नहीं लिया तो और क्या ? तुमने मुए को उधार सराब पिलाई तो उससे समझो ! मेरा गहना है, मैं अपनी चीज़ क्यों दूं ? घर में दाना नहीं, बनिये से उधार ले इत्ते दिन बच्चों को खिलाया। माला उतार कर रखी थी कि बनिये के यहां गिरों रख आटा चावल

ले आऊंगी। कल त्यौहार का दिन है। सो मुआ चुरा कर ले भागा।

छि० का०—(सफाई देने के लिये हाथ हिलाते हुए) चोरी की होगी तो तेरे मर्द ने। हम लोग तेरे घर थोड़े ही गये थे माला लाने। चोर होगा तेरा मर्द।

का० ब०—(राधेमोहन की ओर हाथ से संकेत कर) और यह बड़े भलेमानुस हैं। नसे के उधार में गहना लेकर चोरी सिखाते हैं। इन्हें नहीं दीखता था कि गहना देकर सराब ले रहा है तो घर में दाम नहीं होंगे और बच्चे भूखे बिलखेंगे! (आकाश की ओर हाथ उठा विलाप कर पुकारती है) राम जी करें इनके बच्चे भूखे रहें तो देखें कैसे कर्जे में सराब पीते हैं! दूसरे के खून से होली खेलने वाले! हाय राम जी इनका सत्यानास हो....!

रा० मो०—(झेंप में) भई तुम लोगों के बच्चे भूखे थे तो त....त तुम लोगों को (लज्जा अनुभव कर थुथला जाता है) ख्याल करना चाहिये था अपने बच्चों का।

का० ब०—(उत्तेजना में बच्चे को गोद से उतारकर धमाके से जंगले के भीतर तख्त पर खड़ा करते हुए) सराब के कर्जे में मेरा गहना रखते हो तो इसे भी तुम्हीं रखो! इसे तुम्हीं खिलाना! (बच्चा चीख कर रो पड़ता है) दूसरों को भी लाकर छोड़े जाती हूँ। जो इनके बाप की कमाई खाता है, वही इन्हें भी खिलाये। (स्त्री दुकान से चलने को होती है। राधेमोहन बच्चे के रोने और कमता की बहू के चिल्लाने से बहुत सकपका जाता है।)

जीवन और—(बीच-बचाव करने के लिए एक साथ पुकार उठते हैं)
नंदलाल अरे, अरे, देखो! देखो!

नंदलाल (हाथ की छड़ी खटखटाते हुए बेंच से उठ खड़े होते हैं। और बच्चे को पुचकारते हैं) "पु, पु, चुप रहो! चुप रहो!

जीवन—(दो कदम आगे बढ़कर स्त्री को ठहरने के लिए अनुरोध करता है) ठहरो, ठहरो, सुनो! सुनो!

का० ब०—(पीछे घूमकर रोते हुए) क्या ठहरें? इन्हें क्या खिलाऊं? जो था सो तो सब (राधेमोहन की ओर संकेत कर) इन्हों ने समेट लिया। ऊपर से बड़े भले बन रहे हैं!

नंदलाल—(समझाने के लिए हाथ उठाए) सुनो तो! सुनो तो! (राधेमोहन की ओर घूमकर) अरे भाई राधे बाबू, तुम भी कुछ खयाल करो……!

रा० मो०—(विवशता से डेस्क का ढकना खोलते हुए) लो, ले जाओ। तुम उसकी घरवाली हो। तुम उसे नहीं समझातीं। उल्टे आकर हमारे सिर पर रार करती हो। शराब की दुकान है तो यहाँ क्या इतर बिकेगा? शराब ही बिकेगी। हमने सरकार को ठेके के दस हज़ार नहीं भरे हैं? लो, (माला देता है) हम दिये दे रहे हैं। पर तुम……

छि० का०—(बीच में टोक कर) लोग पियेंगे तो बिकेगी। नहीं दस हजार पूरे कहाँ से होंगे। (उंगली दिखा कर स्त्री को चेतावनी देता है) और तुम जानो कामता की बहू, तुम्हारे भरोसे तुम्हारी चीज लौटा रहे हैं। समझती हो?

रा० मो०—हम यह थोड़े ही चाहते हैं कि तुम्हारे बच्चे भूखे रहें। तुम उसे समझाती क्यों नहीं? हम थोड़े ही उसे पीने को कहते हैं!

छि० का०—(चेतावनी में उंगली उठा कर) हाँ, देखो कामता की बहू, तनखा मिलने पर हमारा उधार मिल जाना चाहिये। नहीं तुम जानो, हाँ……!

का० ब०—(माला हाथ में ले, बच्चे को गोद में उठाती हुई) उधार लेने वाला जाने, उधार देने वाला जाने ! (बच्चे की ओर सन्केत करती हुई) बच्चों का पेट भर लें एक बखत, यही बड़ी बात है। यहाँ बच्चों का ही पेट नहीं भर पाते। रखा है सराब का उधार देने को ! (ठेंगा दिखाती हुई चली जाती है) तुम्हारा उधार हमारे ठेंगे से !

रा० मो०—(स्त्री की ओर संकेत कर नंदलाल और जीवन को संबोधन कर) अब देख लीजिये बाबू जी ! हां, देख लो जीवन भैया ! यह है भलमनसीहत का नतीजा। (कामता की बहू की ओर संकेत कर) इसके बाल-बच्चों का ख़्याल करो तो करज़ के नाम यह ठेंगा दिखाती है।

नंदलाल—(बेंच पर बैठ और फर्श पर छड़ी ठोकते हुए) ठेंगा तो राधे भैया तुम दिखाते रहे। उसे उसके मर्द को नशे में पागल बनाकर उसकी सारी कमाई ऐंठ कर उसके बच्चे भूखे बिलखते रहे। तुम्हारी बोतल ले जाकर उनके हाथ क्या आया ? (हाथ फैलाकर) बताओ, ठेंगा दिखाना तो यही था भैया। (समझाने के स्वर में) राधेमोहन, यह क्या लानत का काम तुमने गले बांध रखा है ? आदमी चाहे आधे पेट खा कर रह जाय, ऐसी जलालत का काम न करे ! (घृणा प्रकट करने के लिये मुंह बिचकाता है।) ऊं हूँ, छी छी !

रा० मो०—(सफ़ाई देने के लिये उत्तेजित स्वर में) बाबू जी आप भी कैसी बातें कर रहे हैं ? जैसे जानते नहीं कि कैसी मजबूरी में इस दुकान पर बैठा हूँ। आप से क्या छिपा है ? चाचा के बाद भैया ही इस दुकान पर बैठते थे। लड़ाई के जमाने में भैया ने सौ दफ़ा कहा कि मैं इस

दुकान पर बैठूं तो वो सप्लाई का ठेका लेकर लाखों के वारे-न्यारे कर दिखायें। कुनबा भर मेरे पीछे पड़ा रहा कि घर का काम छोड़ कर पराई नौकरी करता हूँ। मैं साठ रूपल्ली लेता रहा पर इस दुकान पर नहीं बैठा। आप क्या नहीं जानते ?

नंदलाल—(हाथ उठा कर) भैया, अब तो बैठते हो ? जैसा बुरा तब था, वैसा बुरा अब !

रा० मो०—(विवशता में हाथ फैलाकर) बाबू जी, किस्मत का कोई क्या करे ?...भाग्य में ही लिखा था। भैया चल बसे (आंखें पोंछ लेता है) और बैठना ही पड़ा। पर मेरा ही दिल जानता है कि कैसी जलालत लगती है। ऐसा लगता है जैसे अपनी इज्जत बेच रहा हूँ और दूसरे का घर घाल रहा हूँ। करूँ क्या ? बुजुर्गों ने घर का रोज़गार ही ऐसा बना दिया है।

जीवन—राधे भैया, तुम चाहे जो कहो, मेरे तो चाहे बाल-बच्चे भूखों मर जायं, इस औरत की हालत देख कर मैं तो ऐसी दुकान पर कभी न बैठूं। चाहे मंडी में बोझा ढोकर बाल-बच्चों का पेट पाल लूं। राधे भैया, तुम्हारा दिल जाने कैसा है जो यह सब सह लेते हो ? तुम्हीं बताओ, इसकी वजह से कितने घर बरबाद होते होंगे ?

नन्दलाल—(फर्श पर छड़ी ठोंकते हुए समझाने के लिये हाथ उठा कर) घर के रोजगार की तुमने अच्छी कही ? भैया, कोई गाँठ कतरने को ही अपना रोजगार समझ ले तो ? (प्रश्न की मुद्रा में हाथ फैला देता है) अच्छी पट्टी पढ़ा रहे थे तुम उस औरत को कि हम तुम्हारे घर से

तुम्हारा गहना नहीं उठा लाये ! उठा नहीं लाये तो और किया क्या ? वेश्या क्या लोगों के घर जाकर बुला लात हैं ?

रा० मो०—आप भी बाबू जी कहां की बात कहां ले गये। दुकान पर बैठता हूँ तो लोगों को पुकारता थोड़े ही हूँ कि आओ शराब पिओ !

जीवन—(तर्क की उत्तेजना में जंगले पर हाथ मारते हुए दूसरा हाथ उठा कर) क्या कह रहे हो ? क्या कह रहे हो ? मकड़ी मक्खियों, भुनगों को फंसाने के लिए जाला बुनती है तो क्या उन्हें पुकारती भी है कि आओ फंसो ! आओ फंसो !!·······क्या कहे जा रहे हो तुम ?

नन्दलाल—(शान्ति से समझाने की मुद्रा और स्वर में) सुनो, सुनो यह फंसाना नहीं तो क्या है भैया ? झूठे सुख का प्रलोभन देना फंसाना ही है ! राष्ट्रपिता गांधी जी कह गये हैं, (तर्जनी और स्वर ऊँचे करके) 'नशा देश का सबसे बड़ा शत्रु है।' (बात पलटने के स्वर में) अच्छा, तुम यह बताओ, आदमी नशा पीता क्यों है ?

जीवन—(टोक कर) कमबख्ती आती है तो पीता है और क्यों पीता है ?

नन्दलाल—अरे भाई, यह तो हम और तुम समझते हैं ? पीने वाला तो अपने आपको कमबख्त नहीं समझता। वो क्या समझता है ?

छि० का०—(टोक उठता है) अरे मालिक, गम गलत कर लेते हैं लोग और क्या ? चला आया है पुराना तरीका। दियोता, राक्षस सभी पीते रहे। कोई नयी बात थोड़े ही है कि

आज ही पीने लगे हों ? ये तो संसार की माया है। आप ही कहो ?

जीवन—(राधेमोहन के सामने हाथ बढ़ा प्रतारणा के स्वर में) वाह ! वाह ! राधे बाबू, तुम यहाँ लोगों को ग़म से निजात दिलाने के लिये बैठे हो ?

नन्दलाल—(टोक कर) सुनो, आदमी नशा पीता है दो मतलब से समझे ! ग़म की बात हो तो उसे भुलाने के लिए ! अपने आपको धोखा देने के लिए ! बेसुध हो जाने से ग़म की वजह तो दूर नहीं हो जाती। (दूसरी उँगली उठाकर) और दूसरी बात, सुख का साधन पाये विना अपने आपको सुखी समझने के लिए..........

जीवन—(टोक कर) हाँ, हाँ, तो यह कौन बड़ी अक़्ल की बात है ? पागलपन ! दोनो तरह से पागलपन ! हर तरह से अपने आपको धोका देना ! (राधेमोहन की तरफ हाथ उठा कर कड़े स्वर में) और राधे बाबू, तुम लोगों की खून-पसीने की कमाई समेट कर उन्हें धोका बेचते हो, धोका देते हो !

रा० मो०—(विस्मय और विकलता के स्वर में हाथ फैलाकर) मैं धोका देता हूं ?......मैं, मैं, मैं, कि, (थुथला जाता है) किसे धोका देता हूँ ? भैया मैं किसी को कुछ भी नहीं कहता।

नन्दलाल—(छड़ी फर्श पर ठोकते हुये राधेमोहन का हाथ थाम बात बदलने के स्वर में) राधे भैया, नशाखोरी धोका नहीं, पागलपन नहीं, यह बड़ी चालाकी है ! बड़ा कमीनापन है ! हम बतायें कैसे ? सुनो, ग़म और दुख दूसरों के लिए छोड़ कर खुद नशे में बेखबर हो जाना ! (स्वर ऊँचा करके) अभी देखा तुमने उस औरत के मर्द को ? घर भर का,

जोरू-बच्चों का अन्न बोतल से पीकर खुद बेखबर हो रहा होगा।

जीवन—ठीक कह रहे हैं, बाबू जी ठीक कह रहे हैं! यह नशा-खोरी की बेसुधी बहुत कमीनापन है। वो तो बोतल पीकर धत्त बन गया होगा! घरभर का दुख भुला कर ज्ञानी बना बैठा होगा! इस ज्ञान का मतलब है दूसरों को मूर्ख बनाना!

नन्दलाल—(छड़ी खटखटाते हुये) अरे यह है जेबकटी! अपने हिस्से के दुख का बोझ दूसरों पर छोड़ कर खुद सुखी हो जाना, आनन्द मनाना। दूसरों का पेट भूख से पिचका कर उस पर बेहोशी में नाचना! और कोई आदमी दूसरों से ऐसा ही काम करवाने को अपना धन्दा बनाले तो उसे तुम क्या कहोगे राधेमोहन भैया? (उत्तर के लिये हाथ फैला देता है)

रा० मो०—(कुछ चुप रह कर उदास स्वर में मुँह लटकाये) बाबूजी, आपकी कसम मैं आज छोड़ दूँ इस दुकान को। पर कोई दूसरा काम भी तो मिले! लड़ाई के बाद से, जब से छटनी में नौकरी छूटी है, जाने कितनी दरखास्तें दे चुका हूँ। मुझे यहाँ बैठते अपने मन को ही अच्छा नहीं लगता। कहीं कोई काम मिल जाये तो यहाँ छिद्दू ही बैठ जाँयगे। खुद नहीं बैठूंगा। पर सब जगह नोवेकेन्सी!

नन्दलाल—(उलाहने के स्वर में) क्या बातें करते हो भैया? ऐसे भूखे नहीं मर रहे हो! (हाथ से छत की ओर सकेत कर) इतना बड़ा तो यह मकान है। इसी का एक हिस्सा किराये पर दे दो! यह दूसरों को जानवर बनाकर रोज़ी चलाना भी कोई रोज़ी है?

जीवन—तुम मेरी सुनो, तुम तो शराब बेचकर अलग हो गये। पिये हुए आदमी की हालत का तो ख्याल करो ! इसी औरत के मर्द की बात सोचो ! बुरा न मानना भैया, सोचो तो अगर तुम्हारे घर की औरतों की यह हालत हो ?…

(नेपथ्य से बच्चे की पुकार)—चाचा, अम्मा बुला रही है।

(राधेमोहन पुकार की उपेक्षा में चुप रह जाता है)

नंदलाल—(छड़ी फर्श पर खटखटाते हुए) राधे भैया सुनो, कोई खुद पीने वाला हो, इसे बुरा न मानता हो तो हम कहें कि एक बात है। (बच्चे की पुकार फिर सुनाई देती है। नन्दलाल राधेमोहन को पुकार की उपेक्षा करते देख कहे जाते हैं) तुम पढ़े लिखे आदमी, अपने गले से तो एक घूंट उतारने के लिये तैयार नहीं। खुद इसे बुरा मानो और दूसरों को पशुता बेचो तो तुम्हें अपनी आँखों ही यह कैसा लगता है ?

(नेपथ्य से फिर बच्चे की पुकार सुनाई देती है)—चाचा ! अम्मा बुला रही हैं !

रा० मो०—(जीने की ओर घूमकर झुंझलाहट में ऊंचे स्वर से) अरे भाई सुन लिया; कह दो आते हैं ! (छिद्दू को सम्बोधन कर) छिद्दू-काका क्यों नहीं कह देते कि हम आ रहे हैं। यहां बैठे टुकर-टुकर ताक रहे हो जवाब देते भी नहीं बनता एंह, सिर खा लिया।

छि० का०—(जीने की ओर बढ़कर ऊंचे स्वर में पुकार कर) आते हैं, लल्ली आते हैं। बाबू बात कर रहे हैं।

(नेपथ्य से फिर पुकार) "अम्मा कह रही हैं, खाना ठण्डा हो रहा है।

रा० मो०—(झल्ला कर) हो रहा है तो होने दो! यह घर और दुकान एक साथ होना भी मुसीबत है। घर में जाओ तो दुकान से पुकार पड़ती है। दुकान पर आओ तो घर से! (छिद्दू-काका को सम्बोधन कर) काका कह क्यों नहीं देते, अभी ठहरें! दिया-बत्ती कर के आयेंगे। (जीवन को सम्बोधन कर) जीवन दादा मैं तो कभी से सोच रहा हूँ, कोई मिल जाता इस पाप को समेटने वाला तो मैं इससे हाथ धो लेता। मुझे कोई आधा भी दे दे, तो ठेका उसके नाम कर दूँ।

जीवन—(हस कर) वाह, वाह यह खूब कहा तुमने! यह तो तुमने धर्मात्मा बनिये की बुद्धि दिखाई। भारी सूद पर रुपया कसाई को उधार दे कर गोहत्या के व्यापार का मुनाफ़ा भी ले ले और गोहत्या के अपराध से भी बचा रहे।

रा० मो०—(आत्मरक्षा के लिये विरोध के स्वर में) मुझे ही सब कुछ कह रहे हो! मेरी दुकान बन्द हो जायगी तो क्या सब ठेके बन्द हो जायंगे? मैं तो इसे बुरा मानता ही हूँ। अगर मेरी दुकान बन्द कर देने से शराब बन्द हो जाये तो मैं आज छोड़ दूं परन्तु बाबू जी और सब ठेके तो रहेंगे ही...

नन्दलाल—(राधेमोहन को टोकते हुये उत्तेजना में फर्श पर छड़ी खटाखटाकर) तो फिर तुम्हारा मतलब हुआ कि बहुत सी चोरियां रोज़ होती हैं, दस-पाँच आदमी और चोरी करने लगें तो हर्ज़ क्या है क्यों? (स्वर ऊंचा करके) इतनी वेश्याएं कोठों पर बैठती हैं, दस-पचास और आ बैठें तो कुछ फरक नहीं पड़ेगा, क्यों? पाप में जितनी कमी हो उतना ही अच्छा है भाई! अरे भाई, जो पाप और दोष को

बुरा नहीं मानता, उससे हम क्या कहें? परन्तु तुम्हारी तो आंखें खुली हैं! तुम इसे पाप मानते हो। तुमसे ही तो पाप को छोड़ने और रोकने की आशा की जा सकेगी?

जीवन—(अनुरोध के स्वर में राधेमोहन के कंधे पर हाथ रख कर) राधे भाई, जब बात समझ में आ गई तो छोड़ो इस पाप को! आज ही छोड़ो इस पाप को! कितना विकट परिणाम तुमने नशाखोरी का इस स्त्री के दुर्भाग्य के रूप में देखा है। तुम दूसरों के लिए उदाहरण बन कर दिखा दो भैया राधेमोहन! आज ही लिख डालो इस्तीफ़ा ठेका मन्सूख कराई का।

नन्दलाल—(अत्यन्त अनुरोध के स्वर में) इसी होली में जला डालो बेटा राधे इस पाप को! तुम लोगों को नशे की बरबादी से बचाओगे तो भगवान तुम्हारी आप सुनेंगे; उनकी महिमा अपार है बेटा।

जीवन—और क्या! और यह बला बरबाद भी तो गरीब को ही करती है!

नन्दलाल—(छड़ी खटखटाकर) दूसरों के नाश का यह कारोबार भी कोई कारोबार है? पैसा ही गलता हो तो एक बात है। इससे तो आदमी, आदमी ही नहीं रहता भैया! कितने बरबाद हो गये इसमें? कहो, सौ-दोसौ मैं गिना दूं? मुझे तो उंगलियों पर याद है बेटा!

जीवन—अरे दूर क्या! जाओगे?....इस कामता की ही बात सोचो! बच्चे भूख से बिलख रहे हैं, औरत राहबराह भटक रही है। वह बेहया पीकर धत्त बना बैठा होगा। पीने वाला कमबख्त दूसरों को दुखी बना कर खुद सुखी बनने की बात सोचता है। इससे बड़ा स्वार्थ

और पाप और क्या होगा ! चोरी क्या इससे बड़ा पाप है ?

नन्दलाल—(छड़ी खटखटा कर) पाप पुण्य की बात छोड़ो। हम तो कहते हैं, जो अपने बाल-बच्चों की, घरबार की जिम्मेवारी न समझे और उनके पेट पर पाँव रख कर सुखी बनने की बात सोचे, लानत है उस पर ! और राधे भैया, बुरा न मानना, लानत है तुम पर जो लोगों को इस राह ले जाने का दरवाजा खोले बैठे हो ! इसी बात का खाते हो !

छि० का०—(दुहाई के स्वर में दोनों हाथ फैलाकर) मालिक, आप लोग बडे आदमी हैं पर मालिक यह तो सदा से संसार की रीति चली आई है।

(नेपथ्य से फिर बच्चे की पुकार सुनाई देती है)—चाचा ! अम्मा बुला रही हैं !

रा० मो०—(झल्लाहट के स्वर में छिद्दू को सम्बोधन कर) छिद्दू-काका, तुम से सौ बार कह दिया कि ऊपर जाकर कह दो कि ठहर जायं। सो जाओगे नहीं। यहाँ बैठे टकर-टकर किए जाओगे !

छि० का०—(बेबसी में) अरे मालिक जा तो रहे हैं (अनिच्छा से जीने की ओर बढ़ते हुए) लो, यह चले जा रहे हैं।

जीवन—(भावुकता और अनुरोध के स्वर में) मान जाओ राधेमोहन ! अभी इसी घड़ी इस पाप से इस्तीफ़ा लिख डालो। समझ लेना, इस एक घर की बरबादी का प्रायश्चित्त हो गया। सोचो तो, दूसरों को बरबाद करके तुम कहाँ सुख पाओगे ?

रा० मो०—(नन्दलाल बाबू और जीवन भाई की बात चुपचाप सिर झुकाये

सुनते रहने के बाद दीर्घ निश्वास लेकर) अच्छा, ठीक है। (कुछ झपाटे से डेस्क खोलकर) अच्छा, मैं कागज निकाल लूं····हाँ, जरा रोशनी कर लूँ। (इधर-उधर देख) छिह्. माचिस जाने कहां रख जाते हैं?·······अरे यह है तो, मिल गई माचिस। (राधेमोहन लैम्प जलाने लगता है)

नन्दलाल—मनुष्य अपने ही स्वार्थ को देखे, समाज के कल्याण की चिन्ता न करे तो मनुष्य और पशु में अन्तर ही क्या ?

जीवन—जी हां, और क्या ? ऐसे ही एक दूसरे के उदाहरण से सब लोग भलाई करना सीखते हैं। आज राधे भैया भला काम करेंगे, उन्हें देख कल चार और करेंगे। यही तो तरीका है।

नन्दलाल—हां हां, सोचो ! पहले कांग्रेस में ही भाग लेते लोग कैसे डरते थे ? अरे हमें वो दिन याद हैं·······

रा० मो०—(लैम्प जलाने के बाद) हां, मेरा कलम जाने कहां ? अरे, है तो सही। (प्रश्नात्मक दृष्टि से नंदलाल बाबू और जीवन की ओर देख कर) हां बोलिये न, क्या लिखूं ? कैसे लिखा जायगा ?

जीवन—(जंगले पर कोहनी टिका कर सिर खुजलाते हुये) देखो, हम बताते हैं, वैसे लिखो। लिखो, श्रीमान मंत्री महोदय !

नंदलाल—(छड़ी खटखटाकर) इस में मंत्री महोदय क्या करेंगे ? सीधे एक्साइज़ कमिश्नर को लिखो।

जीवन—हां, ठीक ! ठीक कह रहे हैं बाबू जी। लिखो, मान्यवर एक्साइज़ कमिश्नर महोदय ! अर्ज़ यह···न, न, न, लिखो सेवा में निवेदन है।

रा० मो०—(लिखते हुए दोहराता है) सेवा—में···निवेदन·······है, आगे बोलो जीवन भाई ?

जीवन—लिखो, (श्रुत लेख लिखाने के ढंग से धीमे धीमे) मैं······· अपने···अनुभव से···इस परिणाम···पर पहुँचा हूँ कि ···शराब का कारोबार····नहीं नहीं, हां तुम लिखो मद्य विक्रय का व्यवसाय···किसी भी नागरिक के लिये···

रा० मो०—(जीवन के अन्तिम शब्द दोहराते हुये) मद्य विक्रय···का व्यवसाय, किसी भी····नागरिक के लिये···हां, आगे बोलो भैया····

जीवन—स्मृति को सचेत करने के लिये माथे को पकड़) देखो, क्या कहते हैं उसे ? याद नहीं आ रहा। हाँ, मद्यविक्रय का व्यवसाय किसी भी नागरिक के लिये अपमानजनक है।

नन्दलाल—ठीक तो है। (समर्थन में हथेली फैला कर) अपमानजनक तो है ही।

जीवन—(ज़रा खांसकर) अब दूसरे पैरे में लिखो! मैं यह अनुभव करता हूँ····कि शराब का नशा····आदमी न···न·······न व्यक्ति को···सेल्फिश, नहीं भाई (माथा पकड़ कर) क्या कहते हैं उसे ?

नन्दलाल—(छड़ी खटखटा कर) स्वार्थी, लिखो स्वार्थी !

रा० मो०—व्यक्ति को······स्वार्थी बनाकर ?

जीवन—हाँ, स्वार्थी बनाकर अपने परिवार और समाज के प्रति गैरजिम्मेवार······

नन्दलाल—(छड़ी खटकाकर) यह क्या आधी तीतर आधी बटेर हिन्दी में लिख रहे हो ! सीधी हिन्दी लिखो ! लिखो, परिवार और समाज के प्रति······अनुत्तरदायी बना देता है।

रा० मो०—परिवार और समाज के प्रति…अनुत्तरदायी बना… देता है। लिख लिया। आगे ?

जीवन—(जंगले का सहारा छोड़ गम्भीर स्वर में) आगे लिखो, यह अनुभव…कर लेने के बाद…मैं इस दुकान को…जारी रखने में…असमर्थ हूँ। इसलिए मैं…इस पत्र द्वारा… आपको…सूचना दे रहा हूँ…कि मैं…अपना ठेका… छोड़ रहा हूँ……और कल से…अपनी दुकान नहीं खोलूंगा…बस !

नन्दलाल—आगे यह लिख सकते हो, अगर मेरी दुकान का सामान एजेन्सी वापिस ले ले…………

जीवन—(टोक कर) वाह, वाह, एजेन्सी क्यों ले लेगी ? कैसे लेलेगी ?

(इस समय एक व्यस्क लड़का ग्राहक दुकान में आकर उतावली से पुकारता है —)

ग्राहक—बाबू, हमें एक बोतल महुआ दिला दो। चाचा मंगा रहे हैं।

(नन्दलाल, जीवन और राधे उसकी उपेक्षा कर त्यागपत्र लिखने-लिखाने में लगे रहते हैं।)

नन्दलाल—(छड़ी खटखटाकर) अगर लेले तो अच्छा ही है ! नुक-सान क्यों हो ?…तुम्हारा क्या हर्ज है ? तुम लिखदो न, अगर एजेन्सी वापिस लेले तो कृपा होगी वर्ना इसे सरकारी माल समझकर नष्ट कर दिया जाये। मैं यह नुकसान बरदाश्त करने के लिए तैयार हूँ।

रा० मो०—अच्छा ! सो लिख दिया।

जीवन—बस दस्तखत करदो इस पर ! हाँ, एक काम करो ! वही तो असली बात है। अपने इस त्यागपत्र की पाँच

प्रतियाँ बनाओ और सभी पत्रों को एक-एक प्रति और अपने त्यागपत्र की सूचना भेज दो। ताकि तुम्हारे त्याग का उदाहरण दूसरे ठेकेदारों के सामने आये, उन्हें कुछ शिक्षा मिले !···समझे !

ग्राहक—(अपनी ओर ध्यान आकर्षित होते न देख उतावली से) अरे बाबू! आप लोगों का लिखना-पढ़ना होता रहेगा, हमारे यहाँ लोग बैठे हुए हैं।·(उपेक्षा से खिन्न होकर) अरे यहाँ तो कोई सुनता ही नहीं! (इधर-उधर देख) छिद्दू-काका कहाँ हैं ? (जीने की ओर घूम जोर से पुकारता है) छिद्दू-काका ! ओ छिद्दू-काका !

रा० मो०—(अधिकार के स्वर में) छिद्दू-काका क्या करेंगे आकर ? हम शराब नहीं बेचेंगे। बंद कर दिया हमने शराब बेचना !

ग्राहक—(विस्मय से) क्या कह रहे हो बाबू ? बन्द कर दिया ? अभी सात नहीं बजे। ठेका आठ बजे बन्द होता है।

(जीना उतरने की आहट)

छि० का०—कहो लाखन भैया ! क्या है ? क्यों पुकार रहे हो मालिक ?

ग्राहक—(शिकायत के उत्तेजित स्वर में) यह देखो छिद्दू-काका, क्या कह रहे हैं छोटे बाबू ! देखो तो, उधार नहीं माँग रहे हैं। खरे नकद दाम दे रहे हैं। यह कह रहे हैं कि बन्द कर दिया ! वाह, अभी दिन नहीं डूबा। ठेका आठ बजे बन्द होता है·········

रा० मो०—(टोक कर) लाखन, तुम फिजूल बहस कर रहे हो ! आठ और सात बजे का सवाल नहीं। भैया, हम कह रहे हैं शराब का ठेका छोड़ दिया हमने ! बचन कर लिया

अब शराब नही बेचेंगे, समझे ! ठेके से इस्तीफ़ा लिख दिया, यह देख लो ! (लिखा हुआ कागज़ गाहक को दिखा देता है)

ग्राहक—(विस्मय और विरोध के स्वर में) छिद्दू-काका, ऐसा भी सुना है कभी ? कहीं ऐसा भी होता है ? ठेके से भी इस्तीफा होता है क्या ?

छि० का०—(घबराहट के स्वर में) यह क्या कह रहे हो छोटे बाबू ? कैसा इस्तैफ़ा ?

रा० मो०—(छिद्दू-काका की उपेक्षा कर दृढ़ता से) लाखन, तुमसे कह दिया, लेना हो तो और जगह जाओ !

लाखन—(बेपरवाही के स्वर में) अरे बाबू, बिगड़ क्यों रहे हो ! मुफ़त नहीं माँग रहे। उधार नहीं माँग रहे। खरे नकद दाम हाथ में लिए हैं। तुम नहीं बेचते, न बेचो ! दूसरे बीसियों पुकार कर देंगे (पाँव पटक कर चल देता है)

छि० का०—(बहुत ही घबराहट और व्याकुलता से) अरे लाखन ! ए भैया। सुनो ! ठहरो तो·········

रा० मो०—(बहुत कड़े स्वर में डाँट कर) छिद्दू-काका यह क्या बेमतलब झन्झट कर रहे हो ?···हम कह रहे हैं हम शराब नहीं बेचेंगे ! हमने इस्तीफा लिख दिया ठेके से ! हमने कौल कर लिया !

छि० का०—(आँखे और मुँह बाये राधेमोहन की ओर क्षण भर देखते रह कर व्याकुल निराश स्वर में) बाबू सराब नहीं बेचोगे ? (हाथ फैला कर) इस्तैफ़ा लिख दिया ? यह कैसे हो सकता है बाबू ? घर का रोजगार कोई ऐसे छोड़ सकता है बाबू ? (आग्रह से) नहीं बाबू, होस करो ! ऐसा नहीं हो सकता बाबू !

रा० मो०—(दृढ़ता से) काका हमने कह दिया यह पाप नहीं करेंगे। हमने कौल कर लिया।… बस हो गया आज !

छि० का०—(गिड़गिड़ा कर) नहीं मालिक, तुम ऐसा नहीं कर सकते ! यह बड़े मालिक का बनाया कारोबार तुम नहीं बिगाड़ सकते। बड़ी मालिकिन ऐसा नहीं होने देंगी। हमारे तन में जान है, तो हम ऐसा नहीं होने देंगे। हम घर की बरबादी ……………

रा० मो०—(क्रोध में डाँट कर) बस हो गया छिद्दू-काका ! बको नहीं ! ऊपर जाओ तुम !

छि० का०—(अपमान से क्षण भर स्तब्ध रह जाता है। आंखू में आंसू छलक आते है। आर्द्र स्वर में) बाबू, हमने तुम्हें गोद खिलाया है, हमें ऐसे दुत्कारोगे ?

रा० मो०—(कड़े स्वर में) खिलाया होगा। हम तुम्हें अपना बड़ा मानते हैं पर तुम्हारे कहने से भी पाप नहीं करेंगे ! तुम अभी ऊपर जाओ !

(छिद्दू-काका आंखें पोंछते पांव रगड़ते हुए जीने से ऊपर चला जाता है।)

जीवन—(प्रशंसा और उत्साह के स्वर में) भाई वाह राधे। मान गये भैया ! तुम्हारे जैसे आदमी ही दुनिया में नाम कर जाते हैं, पुण्य कमा जाते हैं।

रा० मो०—(संकोच से) इसमें नाम और पुण्य क्या है भैया ? मैं तो किसी तरह पाप से अपनी जान बचा रहा हूँ।

नन्दलाल—(छड़ी खटखटा कर) भैया, हम पाप-पुण्य की बात नहीं जानते। इतना जानते हैं कि नशे में अपने दुख का बोझ दूसरों के कंधे पर डाल, खुद सुखी हो जाना बड़ा कमीनापन है। इसे मनुष्यता नहीं कहा जा सकता ! तुम

दूसरों को इस पाप से बचाओगे, समाज का भला करोगे, समाज तुम्हें आशीर्वाद देगा। भगवान तुम्हारा कल्याण करेंगे।

(दुकान के बाहर से पुकार सुनाई देती है) अरे ओ राधे भैया ! देखो ! देव की जीजी आई हैं......अरे बाहर आकर देखो तो।

रा० मो०(—ऊंचे स्वर में) आते हैं, आते हैं भाई !

(राधेमोहन उतावली में तख्त से कूद कर दुकान से बाहर जाने को कदम उठाता है। उसके जा सकने से पहले ही धोती पर चादर ओढ़े, मामूली सा घूँघट होती है। एक युवा स्त्री शिथिल चाल से सड़क से दुकान में आ जाती है। स्त्री की बगल में छोटी गठरी है। उसकी बायीं उँगली थामे एक ढ़ाई-तीन बरस का लड़का है और दाहिनी ओर चार-पांच बरस की लड़की।)

रा० मो०—(स्त्री को देख कर विस्मय और प्रसन्नता से)अरे जीजी ! अभी चली आ रही हो ? (छोटे लड़के को पुचकारकर) ओं हो ! रमेश बाबू, अब तो बड़े हो गये तुम ! पांव-पांव चलने लगे ? और तुम गिल्ली रानी ? (लड़की को पुकार कर पुचकारता है) जीजी, खत डाल दिया होता। हम स्टेशन पर आ जाते। खबर क्यों नहीं दी ? क्या ऐसे ही चली आ रही हो ? सामान वामान कुछ.....

जीजी—(उदास स्वर में) टांगे पर है सब भैया।

रा० मो०—टांगे पर है ? अच्छा अभी मंगाता हूँ। (पुकार कर) छिद्दू-काका ! ओ छिद्दू-काका ! नीचे आओ जरा ! भाई, देवकी जीजी आई हैं। (जीजी की ओर साधारण स्वर में) अभी आया एक मिनिट में, देखूं तो ! (सड़क पर झांक कर लौटता है)

रा० मो०—हैं जीजी, टांगे पर सब तुम्हारा ही सामान है ? इतना

सब क्यों उठा लायीं ? तुम्हारे भाई के घर में क्या बिस्तर-भांडे की कमी थी ? जैसे अब तक चलता था, अब भी चल जाता ?

जीजी—(आंचल में मुख छिपा कर रुआसे से स्वर में) यह सब किसे ?···दे आती कहाँ छोड़ आती ?

रा० मो०—(विस्मय से) कि किसे दे आती ? क्यों ?–(सोचकर) चन्दनलाल जीजा जी नहीं आये ? क्या उन्हें छुट्टी नहीं मिली ?

जीजी—(रुआसे स्वर में आंसू पोंछती हुई) उन्हें क्या छुट्टी मिलेगी ? वे तो सदा की छुट्टी ले गये ?

रा० मो०—(विस्मय से थुथलाकर) क···क क्या कह रही हो जीजी ?

जीजी—(आंसू पोंछते हुए हिचकी लेकर) ठीक ही तो कह रही हूं। मैं तो उनके जीते जी बे आदमी की, निरासरे हो गयी।

रा० मो०—(घबराहट के स्वर में) क्या कह रही हो जीजी ? चन्दन लाल जीजा जी कहाँ हैं ? आये क्यों नहीं ?

जीजी—(माथे पर हाथ मार) वे क्या आते, उन्हें तो जहाँ जाना था लात मार कर चले गये।

रा० मो०—(व्याकुलता से) चले गये ? कहा चले गये ? क्या कह रही हो जीजी ?

जीजी—(रुलाई को हिचकी से रोकते हुए) तुम क्या जानते नहीं कैसे थे वो ?

रा० मो०—जानता क्यों नहीं ! वैसे सीधे और भले आदमी दुनिया में कम मिलेंगे। कोई ऐब उन्हें छू नहीं गया।

जीजी—(रुलाई का घूंट भर कर) सीधे क्या थे ? अपने मन की

ही तो करते थे। दूसरों से उन्हें क्या था! नित्त भूरी कमली वाले बाबू जी के यहां समाधि लगाने जा बैठते।

रा० मो०—अरे तो इससे क्या! यह तो धरम का ही काम है।

जीजी—(कुछ उत्तेजित होकर) धरम का ही तो काम है। घर का काम तो कभी नहीं किया। जब देखो जोग-वसिष्ट और गीता पढ़ रहे हैं। बच्चे बीमार पड़ जाँयें तो कह देते भगवान की लीला है। घर में खर्च की तंगी हो तो कह देते, क्या लोभ में फंसी हो? सन्तोष में सब से बड़ा सुख है। और वो बाबा जी उन्हें समझाते रहते, बच्चा यह संसार माया है। साथ कोई नहीं जायेगा। यह दुनिया भरम है। घर बाल-बच्चे, सब भरम हैं। सुख है, संसार को भरम समझ लेने में! बरहम में लीन हो जाने में!

जीवन—(घबराहट से) तो क्या सन्यासी हो गये?

जीजी—(स्वर सम्भाल कर) जाने कितनी बार बाबा जी के साथ जाकर जोगी बनने के लियें तैयार हुए! मैं पांव पकड़-पकड़ कर रोके रही।

रा० मो०—(दीर्घ श्वास ले कर स्वर ऊंचा कर) क्या कह रही हो जीजी? तो क्या सचमुच सन्यासी हो गये? (कुछ सोचकर) पता है, कहां गये? कब गये?

जीजी—(माथे पर हाथ मार) मैं क्या जानूं!····कुछ कह थोड़े ही गये! पिछले सुक्करवार की रात में जाने कब उठ, सांकल खोल कर निकल गये। सुबह दिखाई ही नहीं दिये। मैं उनके पांव पकड़-पकड़ रोकती रहती थी कि अपने बाल-बच्चों की तरफ़ देखो! तो कहते थे, तुम माया हो! हमें भरम में फंसाना चाहती हो!

हम सान्ति चाहते हैं। कपड़ा-लत्ता सब छोड़ गये। घरवार-बाल-बच्चों में सब से प्यारी रही, वही मरी मिरगछाला। उसे ही लेते. गये और यह चिट्ठी (आंचल की गांठ खोलते हुए) लिख कर छोड़ गये (चिट्ठी राधे की ओर बढ़ा) लो भैया।

(राधेमोहन अस्थिर हाथ से चिट्ठी ले लेता है)

जीवन—पढ़के देखो तो चिट्ठी को राधे भैया!

(राधेमोहन आंखे डबडबा जाने के कारण कुरते के दामन से आंखे पोंछने के लिये चश्मा उतार लेता है)

नंदलाल—(छड़ी खटखटाते हुए जीवन से) तुम पढ़ दो न!

जीजी—(गहरी सांस छोड़) तुम्हीं पढ़ दो भैया।

जीवन—(पत्र ले लैम्प के समीप जा रोशनी बढ़ाता हुआ) ज़रा रोशनी तेज कर लें। हूँ, इसमें लिखा है, मैं माया भ्रम का··· बंधन तोड़ कर···सच्चे आनन्द···की खोज···में···जा रहा हूँ। मैं···हिमालय···पर्वत पर···निवास करूंगा। मेरे···पीछे दौड़ने···से कुछ नहीं होगा। मैंने···संसार, माया मोह का···बन्धन तोड़ दिया है। यह संसार माया है। इस······संसार की···चिन्ता भ्रम है।······ असली सुख······माया के भ्रम को······पहचान कर··· ब्रह्म का सुख पाने में है। यही······परम शान्ति है। हम आनन्द की···खोज में जा रहे हैं। तुम भी आनन्द ···प्राप्त करो!

जीजी—(आंखों पर आंचल रख सिसकियों से रुलाई रोकते हुए) हां भैया, वो तो आनन्द की खोज में चले गये। उन्हें तो सान्ति हो गई। आग लगे ऐसी सान्ती और आनन्द में! ऐसा जोग का ही आनन्द लेना था तो गिरस्थी

काहे बांधी थी ? हमारे रोने-धोने से उन्हें क्या ? भाड़ में जाय ऐसा जोग-धरम जो दूसरे का कलपना न देखे ! सात दिन तलक उनकी राह देखती रही। वो भला क्या लौटते ?

नंदलाल—(छड़ी खटका कर) क्या कुछ इन्तजाम नहीं कर गये ? क्यों राधे भैया, तुम्हें भी कुछ खबर नहीं दी ? उनका ऐसा ही ख्याल था तो बाल-बच्चों का तो कुछ ख्याल करना था ?

जीजी—(आंखों पर आंचल रख रूआसे स्वर में) उन्हें किसका ख्याल था ? उन्हें तो अपनी सान्ति और आनन्द का ख्याल था। पाँच दिन जब वे नहीं लौटे तो उनके दफ्तर के साहब से मिलने गयी। भैया बड़ी सरम लगी पर जिस के सहारे सरम थी, वही चला गया तो सरम कैसे निभती ? साहब के सामने रोयी, झींकी, अंगूठा लगा कर तनखा ली।

नंदलाल—तनखा दे दी, यही बड़ी बात समझो। कोई बाल-बच्चे-दार, भला आदमी रहा होगा बेचारा।

जीजी—(दीर्घ विश्वास लेकर) हां भैया, उसने बाल-बच्चों के हाल पर रहम खाकर पूरे महीने की तनखाह दिलादी। दो महीने का किराया बाकी था, वह दिया। और भरोसा क्या था जो और किराया चढ़ाती। दोनों बच्चों को क्या खिलाती ? (राधे की ओर हाथ बढ़ाकर) तुम्ही मेरे भाई हो और बाप के मर जाने के बाद बाप भी तुम्हीं हो, सो तुम्हारे द्वारे आ बैठी हूं। जिसने हमारे साथ ऐसी करी, राम जी उसे कभी सान्ती न मिले ! (ऊँचे स्वर में बिलख उठती है)

(राधेमोहन शून्य की ओर देखता रह जाता है। शेष सब लोग भी जीजी की अवस्था पर द्रवित हो चुप रह जाते हैं)

राधे मो०—(आवेश दबाते हुये) जीजा आनन्द की खोज में चले गये। (कुछ ऊंचे स्वर में) चन्दनलाल जीजा आनन्द की खोज मे चले गये। (स्वर ऊंचा होता जाता है) घरवाली को रुलाकर, बच्चों को बिलखता छोड़कर आनन्द की खोज में चले गये। (और ऊंचे स्वर में) वे संसार का माया और परिवार के उत्तरदायित्व के भ्रम और दुख को छोड़कर आनन्द की खोज में चले गये ! (जीवन को सम्बोधन कर) क्यों जीवन भैया, यह क्या स्वार्थ और कमीनापन नहीं है ?

जीवन—(हाथ फैलाकर भय और विस्मय के स्वर में) राधे भाई, यह क्या कह रहे हो ? महात्माओं को ऐसा नहीं कहते ? महात्मा लोग ज्ञानी होते हैं। अपने मन को शान्त करो !

रा० मो०—(उत्तेजित होकर) मैं अपने मन को शांत करूँ ? (हंसकर) वैसे ही शांत हो जाऊं जैसे हमारे जीजा शान्ति पा गये ? (दृष्टि छत की ओर कर) हमारे जीजा ज्ञानी हैं ? तभी तो वे भ्रम और दुख की माया के बन्धन को छोड़ कर सुखी हो गये और बाल-बच्चों को बिलखने के लिए छोड़ गये ? (जीवन की ओर) तुम उन्हें ज्ञानी और महात्मा कहोगे ? क्यों (नन्दलाल की ओर घूम कर) बाबूजी ? कहेंगे न आप उन्हें ज्ञानी और महात्मा ? (अधिक उत्तेजना में) और कामता को गाली देंगे ? वह नशे में अपने बाल-बच्चों को भुला कर आनंद मनायेगा तो उसे गाली दोगे ? हमारे जीजा ने क्या किया है ?

नन्दलाल—(छड़ी ठोंक कर) बेटा राधे ! ज़रा शांत, शांत हो ! क्या

हो गया तुम्हें ? परमार्थ और नशे को एक में मिलाए दे रहे हो ? सोच समझ कर बात करना चाहिए··· ··

रा० मो०—(अधिक उत्तेजना में) मुझे सोच समझ कर बात करना चाहिए ?····आप लोगों को नहीं ? (उत्तेजना में थुथला कर) जि···जीजा शान्ति के न···नशे में घरवार, बाल बच्चों को लात मार गये त-तो ज्ञानी हैं ? कामता मेरी दुकान से बोतल लेकर बाल बच्चों को भूल जाय तो कमीना है ? कामता कभी-कभी अपने बाल बच्चों के पेट पर पाँव रख नशे में नाचता है इसलिए डरपोक और कमीना है। हमारे जीजा सदा के लिए आनन्द की बोतल चढ़ा कर सुखी हो गये, बीबी-बच्चों को लात मार गए, इसलिए वे ज्ञानी हैं ?

जीवन—(राधे को समझाने के लिये सान्त्वना के स्वर में) क्या कहे जा रहे हो राधे भैया ? सोच कर बोलो ! योगी और शराबी को एक में मिलाये दे रहे हो ? शराबी नशे में कर्तव्य से अन्धा होता है। सन्यासी ज्ञान में परलोक को सत्य और इस दुनिया को भ्रम देखता है।

रा० मो०—(उत्तेजित होकर) सन्यासी ज्ञान में परलोक को देखता है ?···मैं क्या देखता हूँ !···तुम क्या देखते हो ! तुम्हें मेरी बहन और उसके बच्चे बिलखते हुए नहीं दिखाई देते ? जिसे यह दिखाई नहीं देता, उसे क्या दिखाई देता है ? तुम्हें कामता के बीबी–बच्चे बरबाद होते दिखाई देते हैं। कामता को तो नहीं दिखाई देते ! कामता नशे में अनुत्तरदायी बनता है ? हमारे जीजा ज्ञान में क्या बनते हैं ? कामता दो-चार घण्टे के नशे के लिये बाल-बच्चों को ठोकर मारता है। परम ज्ञानी अपने बाल-बच्चों को सदा के लिये ठोकर मार गये !

बोलो कौन नशा बड़ा है ? (जीवन की ओर प्रश्न की मुद्रा में बढ़ कर) मैं पूछता हूँ, कामता की इतनी हिम्मत है कि दूसरों के सामने अपने नशे का अभिमान करे ? कौन नशा बड़ा है ? बोलो....? जो चढ़ पर-कभी टूटता नहीं? और जिसकी प्रशंसा होती है।

जीजी—(माथा ठोक कर रोते हुये) वो सान्ती पा गये पर मुझ अभागिन को तो बेआसरे कर गये ! बच्चों को तो बिलखता छोड़ गये। हाय राम जी आग लगे उनके ज्ञान के नसे में ! आग लगे उनकी सान्ती के नसे में !

रा० मो०--(सीने पर हाथ रख) मैं नशा बेचने के लिए लज्जित हूँ। कामता नशा पीने के लिए शर्मिन्दा है परन्तु हमारे जीजा अपने ज्ञान के नशे का अभिमान करेंगे। अभिमान में अपना नशा बाँटते फिरेंगे और तुम, (तर्जनी से जीवन की ओर संकेत कर) माथा झुकाकर उनका आदर करना ! उनकी सेवा करके पुण्य कमाना और मुझे गाली देना कि मैं नशा बेच कर दुनिया को बरबाद करता हूँ ! (जीजी की ओर घूमकर) जीजी, अच्छे समय आ गयी तुम ! महात्मा लोग ज्ञान का नशा बेचें तो ठीक है। जो समाज उनका पालन करता है, उसी समाज को ठोकर मारें, तो ठीक है। राधेमोहन को बोतल का नशा नहीं बेचना चाहिए। हाँ, कहाँ है मेरा इस्तीफा ? (झपटकर इस्तीफ़े को डेस्क पर से उठा लेता है और सिर से ऊपर उठा कर) बताओ ! मेरी बोतल के नशे में कितने आदमी घर छोड़ गये ? ज्ञान के नशे में घरबार छोड़ने वालों की पल्टनें और अखाड़े इस देश में भरे पड़े हैं ! (इस्तीफ़े को टुकड़े-टुकड़े कर फेंक देता है।)

जीवन—(सांत्वना के स्वर में) राधे भाई, तुम क्रोध में अंधे हो रहे हो !

रा० मो०—(क्रोध और घृणा से धीमा अट्टाहास कर) मैं क्रोध में अंधा हो रहा हूं ?…खूब कहा जीवन भैया ! तुम अन्धे नहीं हो रहे (प्रश्न में हाथ उठाकर) जिसे मेरे परिवार में लगी आग में ज्ञान की ज्योति दिखाई दे रही है ?…हमारे जीजा भी अन्धे नहीं हो रहे जो अपने सुख की खोज में मेरी बहिन को सदा के लिये शान्ति दे गये ?…… जिन्हें अपने आनन्द की खोज मे बीवी-बच्चों का कलपना दिखाई नहीं दिया ?……जो समाज के पेड़ पर बैठ कर उसी की जड़ों पर ज्ञान की कुल्हाड़ी चला रहे हैं ?

जीजी—(सिसक कर पुकार उठती है) हाय रामजी, जिसने मेरा घर बरबाद कर दिया उसे कभी सान्ती न मिले !

रा० मो०—(वितृष्णा से उपेक्षा दिखाने के लिए) जीवन भैया, नशे ! नशे ! की बात है। दोनो नशे चलने दो दादा ! हमारे जीजा बड़े नशे में दुखी संसार को ठोकर मारेंगे और संसार सिर झुका कर उनका पालन करेगा ! वे अपने नशे में संसार को छोड़ने का गर्व करेंगे और हम, बोतलों का छोटा नशा बेचकर उनके संसार का पालन करेंगे ! हम दोनों नशे के व्योपारी हैं ! किसे बुरा कहोगे दादा ?…नशे ! नशे ! की बात है !

रूप की परख

एकांकी नाटक

अथवा

दृश्य कहानी

पात्र

पण्डित हरप्रसाद—प्राचीन परिपाटी के प्रौढ़। कैलाश और सुमित्रा के पिता। बैंक के अकाउन्टेण्ट। लड़की के विवाह के लिये चिन्तित।

मां—घर की मालकिन। कैलाश और सुमित्रा की मां। अशिक्षित, व्यवहार कुशल प्रौढ़ा।

कैलाश—पं हरप्रसाद का पुत्र। नवयुवक। एम० ए० का विद्यार्थी। सामाजिक व्यवहार में क्रान्ति का समर्थक।

सुमित्रा—पंडित हरप्रसाद की पुत्री। आयु बीस वर्ष। माता-पिता की अनिच्छा होने पर भी कालिज में पढ़ रही है। विचारों में भाई की समर्थक।

उर्मिला—सुमित्रा की छोटी बहिन। आयु चौदह वर्ष।

सहेली—कैलाश की मां की पड़ोसिन सहेली।

चेतन—कालिज में कैलाश से एक श्रेणी ऊपर पढ़ने वाला स्वावलम्बी विद्यार्थी। उसके विचारों का सहयोगी और मित्र।

पण्डित रामनाथ—पंडित हरप्रसाद की लड़की के विवाह में सहायता के लिये तत्पर वर दिखाने लाने वाले सज्जन।

धर्मचन्द—पंडित रामनाथ जी द्वारा सुमित्रा के लिये प्रस्तावित वर।

पण्डित ज्ञानचन्द—प्रस्तावित वर के भाई। इलाहाबाद अदालत में पेशकार।

भाबी—भावी बहू को पसन्द करने के लिये आई हुई वर की भाबी।

रूप की परख

पर्दा उठता है

[दिन का चौथा पहर। मध्यम श्रेणी के परिवार का मकान। मकान का मुख्य कमरा, जिसमें मेहमानों का स्वागत किया जाता है। सामने की दीवार में बनी अंगीठी की कानस पर रखी हुई टाइमपीस में अभी चार नहीं बजे हैं। कानस पर टाइमपीस के अतिरिक्त कमरे की सजावट के लिए दो-एक और भी चीजें रखी हैं। अंगीठी के दाईं ओर कोने में लिखने-पढ़ने की एक साधारण मेज-कुर्सी पड़ी है। मेज़ पर कुछ पुस्तकें और अखबार पड़े हैं। अंगीठी के दोनों ओर दीवार में काँच की आलमारियाँ हैं। आलमारियों में पुस्तकें, दवाइयाँ और दूसरी मिलीजुली चीज़ें हैं। कमरे की दाहिनी और बायीं दीवारों के बीचोंबीच दरवाज़े साथ के कमरों में खुलते हैं। बाईं दीवार के साथ दरवाजे के एक ओर औसत दर्जे का कोच पड़ा है। दूसरी ओर की दीवार के साथ तीन-चार कुर्सियाँ पड़ी हैं। कमरे के फर्श पर दरी बिछी है। कमरे के फर्नीचर और सामान से जान पड़ता है कि सामान किसी शैली या आयोजना से एक ही बार में नहीं जुटाया गया है बल्कि घर में रहने वालों की आवश्यकतायें और शौक बढ़ने के साथ-साथ आता गया है। यही बात दिवारों पर लगे चित्रों से भी मालूम होती है। कुछ चित्र बहुत पुराने हैं जो हिन्दू अवतारों और ऋषियों के काल्पनिक रूप हैं। उन से नये चित्र

बाल गंगाधर तिलक, गोखले और गांधीजी के हैं। इन चित्रों के नीचे सबसे नया आधुनिक ढङ्ग के चौखटे में मार्क्स का चित्र है। इस बड़े कमरे का मुख्य दरवाज़ा और दरवाज़े के दोनों ओर की खिड़कियाँ एक बरामदे में खुलती हैं। यह बरामदा ही मकान की ड्योढ़ी भी समझा जा सकता है।

यह मकान पंडित हरप्रसाद का है। वे एक स्थानीय बैंक में एकाउन्टेन्ट हैं। पण्डित जी का पुत्र कैलाश एम० ए० में पढ़ रहा है। कैलाश की दो छोटी बहिनें हैं। सुमित्रा की आयु लगभग बीस वर्ष है और उर्मिला की चौदह वर्ष।

सुमित्रा जल्दी-जल्दी कदम रखती हुई आती है। वह दाँतों से ओंठ दबाए है। बराम्दे का दरवाजा उड़क देती है। सुमित्रा साधारण किनारेदार, सफेद धोती और ऊँची बांह का जम्पर पहने है। उसका चेहरा गहरा गेहुंआ है परन्तु चेचक के गहरे दागों से भरा होने से साँवला लगता है। वह मेज के समीप पड़ी कुर्सी पर गिर सी पड़ती है और बांहों को मेज़ पर गेंडुली की तरह रख उनमें चेहरा छिपा रुलाई को दबाने के लिये सिसकने लगती है।

तीन चार सेकिंड बाद बराम्दे से दो व्यक्तियों के बात करने की आवाज़ सुनाई देती है। उड़का हुआ दरवाज़ा बरामदे की ओर से लगे धक्के से खुल जाता है। कैलाश हाथ में कालिज की कापी और पुस्तकें लिए अपने साथी चेतन से साथ बात करता हुआ कमरे में आता है। वह चेहरे और वेश-भूषा से पहरावे की ओर अधिक ध्यान देने वाला नहीं जान पड़ता। कैलाश खद्दर का कमीज़ और जीन की पतलून पहने है। कुछ लम्बे, रूखे बालों और सफ़ाचट दाढ़ी मूँछ से 'कामरेड' टाइप युवक जान पड़ता है। चेतन आयु में कैलाश से एक-दो वर्ष अधिक है। वह कुर्ता-पायजामा पहने है। उसके कपड़े खूब साफ़ हैं परन्तु इस्त्री किए हुए नहीं हैं।

सुमित्रा चेहरा और कान बाहों में दबाये सिसकते रहने के कारण कैलाश और चेतन के कमरे में आने की आहट नहीं पा सकती। कैलाश और चेतन दोनों बहुत प्रसन्न जान पड़ते हैं। सुमित्रा को रोते देख परस्पर

देखते हैं। कैलाश चुपचाप दो कदम सुमित्रा की ओर बढ़ता है। चेतन सुमित्रा को रोती देख संकोच से कैलाश की ओर देखता रह जाता है।]

कै०—सुमित्रा !

(सुमित्रा पुकार सुन चौंकती है और जल्दी-जल्दी आँचल से आँखें पोंछती हुई कमरे से चली जाने के लिये दाहिनी ओर के दरवाज़े की ओर बढ़ती है।)

कै०—(विस्मय से) सुनो, सुनो ! बात सुनो !··· क्या बात है ?

(सुमित्रा सिर झुकाये आँखें पोंछती ठिठक जाती है।)

कै०—(आग्रह से) बात क्या है सुमित्रा ? What is the matter?

(सुमित्रा आँखें पोंछती निरुत्तर रह जाती है)

कै०—(सुमित्रा की ओर एक कदम बढ़ाकर, अधिक आग्रह से) बताओ न !······ क्या बात है ?··· माँ ने कुछ कहा है ?

सु०—(आँखों से कपड़ा हटाये बिना रूआंसे स्वर में) जाने क्यों पीछे पड़ी हैं······? (आँखों से आंचल हटाते ही कमरे में चेतन को देख संकोच से चुप हो मुँह फेर दूसरे कमरे की ओर बढ़ती हुई) अभी आती हूँ।

चे०—अच्छा, कैलाश मैं चलता हूँ।··· फिर आऊंगा।

कै०—नहीं, नहीं, (अपने हाथ की पुस्तकें मेज पर पटक सोफ़ा की ओर संकेत कर बेतकल्लुफ़ी से) बैठो यार, वाह ! सुमित्रा से बात करके जाना !

चे०—(संकोच से हाथ में थमे काग़ज़ों को लपेटते हुए) भई, इस समय वह परेशान है।······कोई हर्ज नहीं, मैं फिर आ जाऊंगा।

कै०—(जिद्द से) नहीं, नहीं !······बैठो जी ! अभी आती है।

(उपेक्षा दिखाने के लिये) परिवारों में यह सब झगड़े तो चलते ही करते हैं जी !

चे०—(कुछ याद करके) हाँ,....पर यह आज दाखिले के लिये कालिज में नहीं आई ? अगर क्लास में जगह न रही तो फिर पिछले सेशन की तरह झगड़ा पड़ेगा ?....याद है ?

कै०—(एक कुर्सी खींचकर कोच के समीप बैठते हुए) मेरा खयाल है, माँ ने कुछ खड़पेंच खड़ा किया होगा। कहा होगा, क्या करोगी आगे पढ़ कर ?...अभी पूछता हूं (दरवाजे-की ओर झुक कर) सुमित्रा !...आओ न। हां, सुनो ! दो गिलास जल लेती आना ! (चेतन की ओर लौटकर) लेकिन दोस्त इस बार रहेगा मज़ा। तुम्हारा यह काम खूब बना। उम्मीद तो कम ही थी। (समझाने की मुद्रा में) लेकिन भैया, तुम्हें अब संभल कर चलना होगा !

चे०—(मुस्करा कर) क्यों ?.........तुम क्या मुझे बेवकूफ़ समझते हो !

कै०—(चेतन की ठोढ़ी छूने के संकेत से) मुंशी जी, क्या समझते हो ? रिसर्च का स्कालरशिप मिला है। उसे निभाना आसान काम नहीं। पालिटिक्स में ज्यादा पड़ोगे; प्रोफ़ेसर बिगड़ गये तो टापते रह जाओगे, बाबूजी ! क्या समझे ?

(सुमित्रा दोनों हाथों में दो गिलास जल लिए आती है। वह मुंह धोकर आई है। उसके चेहरे पर मुस्कराहट है परन्तु आँखों में रूलाई की लाली नहीं मिट पायी है। गिलास थामे ही चेतन की ओर देख सिर झुका, स्वागत की मुस्कान से)

सु०—कहिए, चेतन भाई ?

(चेतन नमस्ते का उत्तर देता है।)

कै०—आज चेतन बड़ी खुशखबरी लाया है।

सु०—(विस्मय से) क्या ?

कै०—(सिर हिलाकर) खुद ही बतायेगा।

सु०—(आग्रह से) बताइये न चेतन, भाई !

कै०—खुशखबरी सुनायेगा और मिठाई भी खिलायेगा।

सु०—वाह! खुशखबरी यह सुनायेंगे तो मिठाई तुम खिलाओ! खुशखबरी सुनाने वाले का मुंह मीठा किया जाता है। क्यों चेतन भाई ?

चे०—(मुस्कराकर कैलाश की ओर) हां, कायदा तो यही है।

कै०—(हाथ हिलाकर सुमित्रा से) ओहो, कुछ मालूम भी है?······पहले बात तो समझ लें! (चेतन से) देखा ? यह सदा तुम्हारा पक्षपात करती है।

चे०—पक्षपात क्या ? ठीक बात कह रही है !

सु०—हाँ, करती हूँ जाओ ! (कैलाश को चिढ़ाने के लिए ठेंगा दिखाकर) जो लायक होता है, उस का पक्षपात किया ही जाता है। इन्हों ने मुझे छः महीने में इम्तहान नहीं पास करा दिया ? एक तुम हो, कभी मेरी मदद नहीं की। बैठे नावेल पढ़ते रहोगे लेकिन मुझे कभी एक लाइन नहीं बता सकोगे।

कै०—(चेतन से) सुनी इसकी बात ? (सुमित्रा से झगड़ते हुए) तुम्हारा क्या मतलब है, यह मिठाई न खिलाये ?

सु०—(हंसकर) आखिर बात क्या है मिठाई खिलाने की ? बताइये न चेतन भाई !

चे०—(संकोच से) खुशखबरी तो क्या (ठिठक कर) मैं तो तुम्हें धन्यवाद देने आया हूँ।

सु०—(विस्मय से त्योरी चढ़ा कर) धन्यवाद ?·······किस बात का धन्यवाद ?

कै०—(दोनों को चुप कराने के लिये हवा में हाथ मार) धन्यवाद गया भाड़ में।···तुम मिठाई खिलाओ !

सु०—(परेशानी दिखाकर) मिठाई !····धन्यवाद ! पर आखिर बताओगे भी कि किस बात की मिठाई और किस बात का धन्यवाद ? (विस्मय से) क्या ब्याह हो रहा है चेतन भाई का ?

कै०—(हाथ हिला कर) धत्त ! (चेतन से)···देखा, लड़कियों की अकल कहाँ तक जा सकती है ? ···दुनिया में सब से बड़ी बात है, ब्याह ! तुम बता दो भाई।

चे०—(मुस्कराकर) मुझे रिसर्च का स्कालरशिप मिल गया है।

सु०—(प्रसन्नता से आँखें चमक उठती हैं) ओह, ग्रैंड !······ बधाई ! (ज़रा झेंप कर) परन्तु इसके लिये धन्यवाद मुझे क्यों ?·······मेहनती आप हैं। मुझे ही आपने इतनी अच्छी तरह पढ़ाया ?···धन्यवाद तो आपको मुझे देना चाहिये ?

कै०—(सुमित्रा को टोकने के लिये हाथ उठा कर) अजी हटाओ। मेहनत कोई करे, अपने को तो मिठाई मिलनी चाहिये।

चे०—(कुछ गम्भीर होकर) देखिए, असली बात तो यह है कि पिछले साल अगर आप लोगों ने मुझे अपनी ट्यूशन न दी होती तो मैं परेशानी में यूनिवर्सिटी छोड़ गांव लौट गया होता। स्कालरशिप पा सकने का मौका ही न आता।

सु०—(हाथ से टालने का संकेत कर) आप तो ज़रा सी बात का

बतंगड़ बना रहे हैं। आखिर क्या किया हमने ?……
आपकी ट्यूशन न रखते तो किसी दूसरे की रखनी पड़ती !

चे०—(गम्भीरता से) तुम बात को मज़ाक में उड़ा देना चाहती हो। (कैलाश से) एक बात तुम्हें भी नहीं मालूम।…
बताऊं ?

सु०—(माथे पर बल डाल विरोध में) क्या ?

चे०—कैलाश तुम जानते हो दरअसल इसे पढ़ाया तो मैंने बिलकुल नहीं। ट्यूशन तुम लोगों ने पढ़ने के लिये रखी भी नहीं। केवल मेरी मदद ही करना चाहते थे।

कै०—(हाथ झटक कर) हटाओ जी ! इन पुरानी बातों को ! (भौं चढ़ा कर) हूँ, यह सब सुना कर मिठाई खिलाने से बचना चाहते हो ?

चे०—(भावुकता में) मिठाई क्या, मैं तो ज़िन्दगी भर के लिये तुम लोगों का देनदार हूँ। एक बात तुम नहीं जानते (सुमित्रा की ओर संकेत करके) इसने ऐसे आड़े समय मेरी मदद की है कि कह नहीं सकता।

कै०—(भौं उठा कर) वह क्या ?

सु०—(संकोच से) जाने भी दो !…यों ही बातें बनाते हैं। (चेतन को बोलते देख, उसे अवसर न देने के लिये चिल्लाती है) मिठाई ! मिठाई…!

चे०—(चिल्लाहट की परवाह न कर कैलाश की ओर) तुम लोगों से ट्यूशन में मिलने वाले रुपयों से मेरा किचन का ही खर्च चलता था।…फ़ीस मैंने कहाँ से दी ?

सु०—(लज्जा से झुंझलाहट दिखा कर) जाने भी दीजिये। मैं जाती हूँ…(कमरे से जाने लगती है)

कै०—(सुमित्रा को टोक कर) अरे, कहाँ जा रही हो ? (कुर्सी से उठ कर) तुम यहाँ बैठो ! (कोच पर बैठ जाता है ।)

सु०—(चेतन से) चेतन भाई, अब उन बातों को जाने दीजिए ! मिठाई खिलाइये आप !

चे०—(आग्रह से) नहीं, मैं वह बात कह कर अपना दिल हलका करना चाहता हूं ।

कै०—आखिर बात क्या है ? कौन बोझ पड़ा है तुम्हारे दिल पर ? (सुमित्रा को प्रतीक्षा करने का संकेत कर) कह लेने दे भई इसे !

चे०—सुनो, फ़ीस के लिये मेरे पास रुपये नहीं थे । मैं बहुत उदास था । (सुमित्रा की ओर संकेत कर) सुमित्रा ने मुझ से पूछा परेशान क्यों हो ? परीक्षा की फीस का प्रबन्ध न हो सकने की बात बताई । जानते हो, इसने क्या कहा ? बोली, भैया से न कहियेगा……

सु०—(माथे पर बल डाल, टोक कर) तो अब क्यों कह रहे हैं आप ? आपने तो वायदा किया था कि नहीं कहेंगे ।

कै०—समझ गया ! समझ गया मैं ! हटाओ भी, तुम……

चे०—(आग्रह से) सुनो तो, इसने कहा—भैया मेरे पास रुपये देखते हैं तो छीन लेते हैं……

कै०—(आँखें निकाल कर) अच्छा, बीवी जी ?… यह बात ? शिकायत करती हो !

सु०—(धमकाने की मुद्रा में) तो क्या झूठी शिकायत है ? (मुस्कराकर) डांटते हो ऊपर से ? उल्टा चोर कोतवाल को डांटे ? चेतन भाई, जानते हो इन्हें ? राखी, भैया-दूज को पिताजी से रुपये लेकर मुझे देंगे । फिर कहेंगे,

बड़ी अच्छी बहन है, मुझे उधार दे दे। उधार वापिस कभी नहीं……

चे०—हाँ, तो इसने कहा, आप मेरे सौ रुपये रख लीजिये। अभी मुझे ज़रूरत नहीं है। जब कभी जरुरत होगी ले लूंगी। समझ तो मैं गया फिर भी पूछा, इन रुपयों से अगर मैं अपनी फ़ीस दे दूँ? ट्यूशन में पूरे कर दूँगा। आप बोलीं, यही तो मेरा मतलब है। इसने बताने को मना कर दिया था। पीठ पीछे चुगली न खा कर सामने ही शिकायत कर रहा हूं। तुम्हीं बताओ! मुझे अगर स्कालरशिप मिला तो उसका श्रेय किस को है?

सु०—(लजा कर बात टालने के लिए) जी हाँ, मिठाई न खिलाने के लिए इतनी बातें बना रहे हैं। बस उन रुपयों ने ही तो तुम्हारी जगह जा कर इम्तिहान दे दिया था न? (कैलाश से) भैया, इनसे मिठाई खा कर छोड़ेंगे।

कै०—(चेतन के कन्धे पर हाथ रख कर) अच्छा भाई, फिर खिला डालो मिठाई।…कब खिलाओगे?

सु०—मैं बताऊं?

(दोनों उसकी ओर देखते हैं)

सु०—पहला स्कालरशिप मिलने पर।

कै०—(उगली उठाकर) ग्रैंड फीस्ट?

चे०—रही। पर हाँ (कुछ याद करके) मुझे तुम वह किताब तो लौटाओ…प्रोफेसर रत्नाकर की किताब "ओरिजिन आफ़ फेमिली।"

(दायीं ओर के दरवाजे से आवाज़ आती है) "भैया……भैया!"

कै०—(दरवाजे की ओर घूमकर) क्या है ?

(कैलाश की छोटी बहिन उर्मिला आती है। उर्मिला का रंग बहिन से खुला हुआ और चेहरा हँसमुख है। वह हल्की रङ्गीन धोती पहने है। सिर के केश भी बहिन की अपेक्षा अधिक संवारे हुए हैं।)

उर्मिला—(रहस्य भरी मुस्कान से) भैया, अम्मा तुम्हें बुला रही हैं।

कै०—क्यों बुला रही हैं ?...क्या है ?

उ०—(मुस्कराती हुई) एक बात है।...बताऊँ ? (मचल कर सुमित्रा की कुर्सी की पीठ पर झुक) तुम्हें बाजार जाना होगा।

कै०—क्यों जाना होगा ? अभी तो मैं कालिज से आया हूं।

उ०—(सुमित्रा की कुर्सी की पीठ पर झुकते हुए) हम नहीं जानते। अम्मा बतायेंगी।

क०—(चेतन से) तुम कहीं जा रहे हो क्या ?

चे०—(सिर हिला कर) कहीं नहीं।

कै०—तो फिर साथ ही चलेंगे। बातचीत करते चले-चलेंगे।

सु०—(सहसा गम्भीर हो) अच्छा मैं जा रही हूं। (खड़ी हो जाती है)

कै०—(सुमित्रा के चेहरे पर आ गयी उदासी को लक्ष्यकर) हूँ, क्यों ? (चेतन को सम्बोधन कर) तुम वह किताब तो मेरे कमरे से ले लो, आलमारी में है।...मैं वहीं आता हूँ।

(चेतन कमरे से चला जाता है)

कै०—(उर्मिला से) तू चल। मैं आता हूँ (उर्मिला चली जाती है) (सुमित्रा को सम्बोधन कर गम्भीरता से) क्यों बात क्या है ?

(सुमित्रा की आंखें डबडबा जाती हैं। वह निरुत्तर रह जाती हैं)

कै०—(चिन्ता से) बात क्या है ? बताओ न !

(सुमित्रा आँचल आँखों पर रख सिर झुका लेती है।)

कै०—तुम दाखिल होने के लिए कालिज क्यों नहीं आई ?... मैं और चेतन तुम्हारी प्रतीक्षा करते रहे। जब दाखिला बन्द हो जायेगा तो परेशान होगी।

सु०—कैसे होजाऊं दाखिल ?

कै०—(भौं सिकोड़ कर) क्यों?......क्या मतलब ?

सु०—मां से पूछो !

कै०—(विस्मय से) क्या पूछूँ माँ से ?...सुवह सब बात तय हो गयी थी।

सु०—(झुँझलाहट से) तुम्हारे सामने तो बात तय हो गयी थी। तुम गये तो मुझे रोक दिया (स्वर तीखा हो जाता है) जाने क्यों मुझे गले का पत्थर समझ रही हैं। मैं तो कहती हूँ, मुझे पढ़ाना नहीं चाहतीं, न पढ़ायें। मैं ऐसे ही किसी स्कूल में नौकरी कर लूंगी, नर्स बन जाऊंगी और कुछ नहीं होगा तो महराजिन या महरी का काम करके अपना पेट पाल लूंगी। किसी से यह भी नहीं देखा जाता तो कह दो, कुछ खा के मर जाऊं। पर वह अपनी बात पर अड़ी हैं। (आँचल से मुँह ढंक लेती है)

कै०—हूँ......(बात समझने के लिए क्षण भर फ़र्श की ओर देख कर) तो क्या कोई और प्रबन्ध हुआ है ?.........क्या कहीं और बात चली है ?

सु०—(आँखें पोंछ कर झुँझलाकर) मैं कोई बरतन भांडा हूं जो गाहक मुझे पसन्द-नापसंद करेगा ? (क्रोध में कुर्सी से खड़े हो कमर पर हाथ रख) जैसे कोई हंड़िया को ठोक-बजा कर देखता है कि मजबूत है कि नहीं; अच्छी है

तू कौन पड़ा है पीछे? मैंने तो उस से बात भी नहीं की?

कें०—यह पीछे पड़ना ही तो है। जब वह नहीं चाहती तो तुम उसे शादी के लिये क्यों परेशान करती हो?

माँ—(बेटे की मूर्खता पर आश्चर्य से आंखें फैला) क्या कह रहा है तू! (गाल पर उंगली रख) क्या लड़कियों का ब्याह नहीं होता? क्या बेटियों को घर बिठा कर रखा जाता है?

कें०—बेटियाँ घर नहीं बिठा कर रखी जातीं तो जबरदस्ती किसी के गले मढ़ दोगी? आखिर है तो तुम्हारी बेटी! एक दफ़ा तो तुम तमाशा कर चुकीं!

माँ—हाय मेरे राम! (विस्मय प्रकट करने के लिए आँखें फैलाये ठोड़ी पर उंगली रख) क्या तमाशा कर चुकी मैं? कैसी बातें करता है तू? (अपने अधिकार की अनुभूति से जरा तन कर) अरे, तुझे इन बातों से क्या मतलब? तू लड़का है। लड़कों की तरह बात किया कर! तेरा काम पढ़ना-लिखना है। तू पुरखा काहे को बनता है?

कें०—पुरखा बनने की इसमें बात क्या है? पिछले बरस पिताजी एक बेवकूफ को लड़की दिखाने के लिये पकड़ लाए। उस ने जा कर कह दिया, तुम्हारी बेटी उसे पसंद नहीं। उस बिचारी का रो, रो कर क्या हाल हुआ? उसके चेहरे पर माता के दाग़ हैं तो इसमें उसका क्या कसूर? तुम तो ऐसे कर रही हो जैसे कोई खोटा सिक्का दूसरे के हाथ थमा देने के लिये बेचैन हो!

मां—(क्रोध में) बड़ी लम्बी ज़बान हो गई है तेरी! अब यह कायदा ही चल गया है। लड़के लड़कियों को देखते

हैं तो हम कैसे इन्कार कर दें? (स्वर नीचा करके) इक्कीसवाँ लग गया है उसे! मेरी इस उम्र में तो तू गोद में था। जमाने को कोई क्या करे! (रहस्य के स्वर में) और बिचारे तेरे पिता जी की तो नींद हराम हो.......

कै०—(टोककर, विरोध के स्वर में) खामखा नींद हराम हो रही है उनकी। जैसे मैं हूँ, तुम उसे मेरा छोटा भाई ही समझ लो, बहन न समझो। अच्छी भली इंटर में पास हुई है। उसे बी० ए० पढ़ने दो। जो देखने आयगा, माता के दाग ही देखेगा। उस के चेहरे से उस की कीमत लगा कर उसका अपमान क्यों कराती हो?

मां—पागल हुआ है तू। भला हो पंडित रामनाथ का। बड़ी मेहनत से उन्हों ने अच्छा घर ढूँढ़ा है। बड़े अच्छे सीधे-सादे लोग हैं। ज़मीन-जायदाद है। भगवान करे, यह सम्बन्ध बन जाय। लड़की अपना घर बसाये जा कर।

कै०—तो यहाँ वो तुम्हें क्या दुख दे रही है? उसने तो कोई बेचैनी नहीं दिखाई। उसे पढ़-लिख लेने दो। वह तुम्हारे सिर का बोझ नहीं बनेगी। जब मौक़ा होगा, ब्याह भी कर लेगी! तुम उसकी गठरी बाँध कर किसी को दान कर देने का पुण्य कमाने की जिद्द क्यों कर रही हो? लड़की देकर 'टका' न लिया 'पुण्य' ले लिया! अपना ही फायदा सोचती हो। उसके जी की बात तो नहीं!

माँ—(क्रोध में डाँटते हुए) तू बहुत बढ़-चढ़ कर बातें न किया कर। लड़का है, लड़कों की तरह रहा कर। जब तेरी

बहू आ जायगा, बाल-बच्चे होंगे, तू अपनी लड़कियों को कालिज में पढ़ा कर खुद ब्याह करने के लिए कह देना। हाँ, देखो तो, इसे? बड़ा बनने लगा है। तुझे जो कहा है, जाकर कर!

कै०—(दुखी होकर) देखो माँ, कहीं पिछली बार की तरह हुआ तो फिर क्या होगा? तब वे लोग सुमित्रा को नापसन्द कर गये तो उस अपमान में यह छः महीने रोती रही, अगर फिर वैसा हुआ तो क्या होगा।

माँ—(झमक कर) तुझे कई बार कहा है, बहुत चौधरी न बना कर। जब देखो लिच्चर देने लगता है। तेरे पिता सब समझते हैं। जो करना होगा करेंगे। तू जा कर बाजार से सामान ला।

(दूसरे कमरे से आवाज सुनाई देती है)

स्त्री—"मितरा की माँ!......मितरा की मां!"

माँ—"बहिन आई मैं। (कैलाश से) जा तू जल्दी जा।

(कैलाश के जाने से पहले ही माँ को पुकारने वाली स्त्री हाथ मे एक पोटली लिये कमरे में आ जाती है। उसे देख कैलाश चुप रह जाता है। कैलाश स्त्री को मौसी कहकर पायलागन करता है। मौसी उसे "जियो बेटा" कह कर आशीर्वाद देती हैं। कैलाश माँ के हाथ से नोट ले कर चला जाता है।)

स्त्री—(मुंह में भरा पान सम्भालते हुये) कब आ रहे हैं वो लोग?

माँ—यही सूरज डूबते-डूबते आएँगे। अभी तो कैलाश के पिता भी दफ्तर से नहीं लौटे।...बस आते ही होंगे।

स्त्री—(हाथ की पोटली दिखा कर) यह देखो, सब ले आई हूँ मैं।

माँ—बैठो तो!

(दोनों पोटली को बीच में रख तख्त पर बैठने के ढंग से कोच पर बैठ जाती हैं।)

माँ—क्या लाई हो देखूँ !

स्त्री—सभी कुछ ले आई हूँ बहिन (पोटली खोलते हुए एक एक चीज़ दिखा कर) यह करीम, पौडर, गालों की लाली, होठों की सुर्खी। (हाथ के संकेतों से समझाती हुई) बहिन, मैं उसे ऐसा बना दूँगी कि तू अपने पेट की लड़की को न पहचान सके। हाँ, देख के हैरान रह जाओगी कि यह गुलाब कहाँ से आ गया ?···क्या समझती हो तुम !

माँ—(विस्मय से स्त्री की ओर देखते हुए) सच कह रही हो जग्गो की माँ ! (गाल पर हाथ रख लेती है।)

स्त्री—और नहीं तो क्या ! (हाथ से संकेत करके) पहली दफ़ा वो कल्याणपुर वाले मितरा को देखने आए थे, तब नहीं मैंने तुम से कहा था कि लाओ बहिन लड़की का बनाव सिंगार कर दूँ। तुम्हो नहीं मानी। नहीं तो काहे को वह झगड़ा होता।

माँ—हाय मेरे राम ! (हाथ मलते हुए) क्या कह रही हो बहिन ! (अपने ऊपर से यह उत्तरदायित्व दूर करने के भाव से हाथ हिलाती हुई) बहिन मैं क्या नहीं मानी ? वह तो लड़की ही ऐसी है। (सहेली के कंधे पर हाथ रखकर) बहिन, तू जानती है, सभी लड़कियों को सौक होता है। माँग कर, लड़-झगड़ कर बनाव सिंगार की चीज़ें लेती हैं। यह जाने कैसी बैरागन मेरे पेट से जन्मी है ? कभी इस ने इन चीज़ों की तरफ़ देखा ही नहीं।

स्त्री—वाह बहिन ! सिंगार ही तो जवानी में औरत का रूप है। दो-चार बाल-बच्चे हो गये तो कौन सिंगार देखता

है और किसे करने को फुरसत रहती है ? हाँ तू क्या नहीं जानती !

माँ—(रहस्य की बात कहने की मुद्रा में सहेली के कन्धे पर हाथ रख कर) हाय राम ! वो मरी तो कहती है, मुँह पर रंग पोत कर धोखा क्यों दूँ ? रंग झड़ जायेगा तो कोई क्या कहेगा ?

स्त्री—(उसी तरह हाथ बढ़ा कर) हाय बहिन, तुम भी क्या कहती हो ! रूप तो बनाव सिंगार का होता है। रूप-सिंगार तो तू जानती है, एक बार देखा जाता है, पसन्द के वखत छः महीने में सब पुराना पड़ जाता है। घर की चीज़ का रूप कौन देखता है ? फिर तो काम देखती है दुनिया। बहिन, औरत का बनाव सिंगार तो ऐसा है, जैसे मिठाई पर लग चाँदी। खाने में चांदी का स्वाद थोड़े ही आता है, मिठाई का ही आता है। (तर्जनी दिखाकर) सच्ची जान तू मिठाई जब तक विकती नहीं, तभी तक बरक लगाया जाता है।

माँ—हाँ, और क्या सुमित्रा को बुलवाया नहीं तुमने ?

स्त्री—अरे मैं तो भीतर सब जगह देख आई। कहीं दिखाई नहीं दी। मुन्नी से भी पूछा। वह कहने लगी कि बहिन कोठड़ी मूंद कर बैठ गई है।

माँ—(ज़ोर से आवाज़ देती है) उर्मिला…ओ उर्मिला।…

उ०—हाँ, माँजी…(नेपथ्य से उत्तर मिलता है)

स्त्री—कैलाश के पिता जी नहीं आये अब तक ?

माँ—आते ही होंगे।

(उर्मिला आती है।)

माँ—(उर्मिला से) तेरी बहिन कहाँ है? बुला न उसे। मौसी आई हैं, राह देख रही हैं।

उ०—(उपेक्षा से) कई बार तो बुलाया माँ जी। जीजी कहती है, मैं यह सब नहीं कराऊँगी।

माँ—हाय राम जी! (उंगली गाल पर रख अपनी सहेली की ओर देखती हैं।)

स्त्री—(दोनों हाथ फैला कर) बहिन तो फिर मैं क्या करूँ?

पिता—बेटा उर्मिला! (बराम्दे की ओर से आवाज़ आती है)

उ०—पिताजी आ गये, माँ!

स्त्री—(सिर का आँचल खींचती हुई अपनी पोटली समेट कर) अच्छा बहिन तो मैं चलूँ। कैलाश के पिताजी आ रहे हैं। (जल्दी-जल्दी में उठकर खड़ी हो जाती है।) कब आ रहे हैं वो लोग? मैं भी आकर लड़के को जरा देख जाऊंगी। कैसा है लड़का?

माँ—(गाल पर हाथ रख) हाय राम, मैं क्या जानूं बहिन? मैंने कहां देखा है अभी?

(कैशाश के पिता प्रवेश करते हैं। उन्हें आया देख मां की सहेली घूंघट खींच तुरन्त चली जाती है। प० हरप्रसाद पक्की उम्र के सज्जन हैं। उनकी लम्बी लम्बी मूछें प्रायः खिचड़ी हो गई हैं। सिर पर किश्टी टोपी उनके पुराने विचारों और न बदलने वाले अभ्यासों की सूचक है। वे बंद गले का कोट और ढीला सा चूड़ीदार पाजामा पहने हैं।)

पिता—(हाथ की छड़ी उर्मिला की ओर बढ़ाकर) बेटा, भगवान भला करे, रखो इसे। (कैलाश की माँ से शिकायत के स्वर में) अरे, तुम लोग कर क्या रहे हो? भगवान भला करे, तुमने अभी तक जगह भी ठीक नहीं की? सामान

कुछ मँगवा भी लिया है बाजार से ? सुनती नहीं हो, उन्होंने अभी आने को कहा है ! यह सब कैसे होगा ?

माँ—कैलाश चला तो गया है। दस कदम पर तो चौक है। अभी हो जाता है सब कुछ। वे लोग तो दिन डूबे आयेंगे !

पिता—(परेशानी में हाथ फैलाकर) कौन कहता है, दिन डूबे आयेंगे ? अभी रामनाथ बैङ्क में आये थे। कह गये हैं कि तुम घर चलो, हम उन लोगों को लेकर आते हैं।

माँ—(विस्मय से) हाय मेरे रामजी ! (गाल पर उँगली रख लेती है) दुपहर में तुम्हीं तो कह गये थे कि सात बजे आयेंगे !

पिता—अरे भई, रामनाथ सुबह आये तो सात ही बजे की बात थी। भगवान भला करे, शाम को फिर कह गये कि अभी लेकर आते हैं। तुम जानती तो हो नहीं। लड़के का बड़ा भाई इलाहाबाद से आया हुआ है ? उसे रात की गाड़ी से लौट जाना है। बात तो उसी को करनी है। जब वह चाहेंगे, तब आयेंगे। मैं रोक सकता हूं उन्हें जल्दी आने से ?

माँ—तो घबराते क्यों हो ? सब हो जायेगा। कैलाश आता ही होगा। कब का गया है। दस कदम पर तो चौक है। उर्मिला जा, जाजम और कालीन उठा ला। मैंने निकाल कर रख दिये हैं।

पिता—(हाथ उठाकर) भगवान भला करें, पन्नालाल के यहां से कुछ फूल-ऊल मँगा लिए होते। फूलदान तो घर में थे ही। कोई अगरबत्ती वगैरह जला दो। ऐसे मौके पर सब किया ही जाता है। भगवान भला करें। चाय बनवा रही हो न ? शरबत भी तैयार रखना। शायद

वो लोग चाय न पीते हों ? (परेशानी में हाथ हिलाते हुए) लाओ मैं भी कुछ करूँ। (कोट उतार खूंटी पर लटकाते हुए) मैं तो जानता था, मेरे किये बगैर कुछ न होगा।

(उर्मिला जाजम और कालीन ले लौटती है और अपनी माँ की सहायता से कमरे को सजाने लगती है ।)

पिता—(आस्तीने चढ़ाते हुए) लाओ मैं भी कुछ करूँ तो। मैं नहीं करूँगा तो कुछ नहीं होगा। भगवान भला करे, तुम यह थोड़े ही समझते हो कि किस समय किस चीज़ की क्या बात होती है ? (कालीन उठाने के लिये झुकते हुए) वो लोग अभी आ जायें तो ?

माँ—(पति के हाथ से कालीन लेती हुई) हाय राम जी, क्या कर रहे हो ? तुम और गड़बड़ा देते हो। बैठो न, हो जाता है। अभी हो जाता है।

पिता—कैलाश कहाँ गया ?

(उर्मिला सजावट के काम में लगी रहती है ।)

माँ—(हाथ उठा कर) हाय राम जी, कैसे घबरा जाते हो ? कहा तो तुमसे, बाजार से मीठा-नमकीन लेने भेजा है। अभी आता होगा।

पिता—मीठा-नमकीन ? उसे कुछ फल-वल लाने को नहीं कहा ?

(उर्मिला बिछे हुए कालीनों पर गाव तकिये ला कर रखती है ।)

माँ—(तकियों को सिधाते हुये) हाय राम जी ? फल लाने के लिए भी कह दिया है। तुम तो ऐसे घबरा देते हो।

पिता—कौन सा फल ? भगवान तुम्हारा भला करें, बता तो दिया होता उसे क्या फल लाना है। नासमझ लड़का है, कहीं ककड़ी-खीरा ही न उठा लाये ! ऐसे समय दस-पांच रुपये की परवाह नहीं की जाती कैलाश की माँ !

माँ—(मसनदों के बल निकालते हुए) हाँ, हाँ। सब हो जायगा भई। तुम जाकर मुंह-हाथ तो धो लो न। तुम उन लोगों को यहाँ बिठाना। इतने में हम लोग तैयार हो जायंगी।

(कैलाश और चेतन मिठाई की और फलों की टोकरियाँ लिए हुए आ जाते हैं।)

माँ—(उन्हें देखकर पति से) यह लो आ गया, अब जाओ न मुँह-हाथ धोकर कपड़े बदल लो। (उर्मिला से) उर्ला, तू और कैलाश यह ठीक करो। मैं तुम्हारे पिता जी के लिये कपड़े निकाल दूँ।

पिता—(कैलाश से) हाँ बेटा, भगवान भला करे, जल्दी जल्दी कर डालो। वे लोग आते ही होंगे। (तैयारी में सहयोग देने के लिये आस्तीन समेटने लगते हैं)

माँ—(पिता से) हाय राम, तुम तो जाओ न। ये सब कर लेंगे।

(कैलाश की माँ मिठाई और फल लेकर कैलाश के पिता के साथ भीतर चली जाती हैं। उर्मिला अंगीठी की कानस पर अगर बत्तियाँ जलाने लगती है।)

चे०—(कैलाश से उर्मिला को ओर संकेत करके) देखो तो, यह लड़की बड़ी खुश है आज? जब इसकी बारी आयेगी तो कौन तैयारी करेगा?

उ०—(झमक कर) भैया, कैसी बातें करते हो। हमें नहीं अच्छा लगता। हम तो शादी करेंगे ही नहीं।

चे०—(विस्मय प्रकट करता हुआ) शादी नहीं करोगी?····तो क्या करोगी?

उ०—क्यों?······हम पढ़ेंगे।

कै०—हट पागल, शादी अच्छी जगह हो जाये इसीलिये तो लड़कियाँ पढ़ती हैं।

उ०—(अंगूठा दिखाकर) आहा बड़े आये !...आप कीजिये शादी ! हम क्यों करें !

चे०—(कैलाश से) अच्छा भाई, अब मैं चलता हूँ ।

कै०—(चेतन के समीप आकर) क्यों ? जा क्यों रहे हो ? अभी न जाओ, ठहर जाओ तो क्या है ?

चे०—कुछ नहीं । ठहर सकता हूँ लेकिन यहाँ मैं क्या करूंगा ?

कै०—(उर्मिला की ओर देखकर) यह बत्तियाँ-वत्तियाँ मैं जला लूँगा । तू फूल और फूलदान तो ले आ । देख, एक छोटी मेज़ भी लाना । जाओ, जल्दी जाओ । (उर्मिला बाँयें दरवाजे से चली जाती है ।)

कै०—(चेतन के समीप आकर) मेरा खयाल है, तुम यहीं रहो तो अच्छा है । (अटकते हुये) तुम...तुम जानते हो, पिछली बार ऐसे अवसर पर अच्छा अनुभव नहीं हुआ ।

चे०—(जिज्ञासा से मुंह उठाकर क्षण भर उसकी ओर देख) क्या मतलब तुम्हारा ?

कै०—(खिन्न स्वर में) I do not want Sumitra to be insulted. मैं इस बार सुमित्रा का अपमान नहीं होने देना चाहता । आखिर उसका कसूर क्या है ? उसके चेहरे पर चेचक के दाग़ हैं तो वह क्या करे ?

चे०—(उसी मुद्रा में) तुम जो कहो, मैं करने के लिये तैयार हूँ । लेकिन मैं करूंगा क्या ?...and you know, I respect her अगर कुछ ऊट-पटांग बात हुई तो भाई मुझे बुरा लगेगा ।

कै०—(इधर-उधर देख कर हाथ मलते हुये)...I know....well I don't know. I...cant say...अभी तो कुछ नहीं कह सकता, लेकिन We. can depend on you. हम

तुम्हारा भरोसा कर सकते हैं। ऐसे समय तुम यहाँ रहो तो अच्छा ही होगा।

चे०—All right I will stay…मैं नहीं जाता। मुझ से तुम लोगों के लिये जो कुछ भी बन पड़े, तैयार हूँ।

(कैलाश के पिता एक तौलिये से हाथ, मुँह, मूँछे पोंछते हुए आ जाते हैं। वे अब कुर्ता-धोती पहने हैं।)

पिता—(हाथ मुँह पोंछते हुए) हरि ओम। हरि ओम भगवान भला करें, बेटा सब ठीक हो गया?

कै०—जी हाँ, सब कुछ हो गया।

(उर्मिला फूल और फूलदान लिये आती है। कैलाश फूल सजाने लगता है।)

पिता—सुनो बेटा…कुछ फल वल लाये हो?

कै०—जी, एक दर्जन संतरा, एक दर्जन केला, थोड़ा अमरूद।

पिता—कोई अच्छी चीज ले आते!

कै०—अच्छा ही है और क्या, अनार तो दो रुपये सेर हैं। बीमारों के लिये ही समझिये।

पिता—ले आते, क्या था, खैर…

(पुकार सुनाई देती है) कैलाश बाबू! भैया कैलाश! उर्मिला बेटी!

पिता—(घबराहट में हाथ उठाकर) अरे, वे लोग आ गए! जल्दी करो न?

कै०—सब हो गया। आप उन्हें लाइये। उर्मिला, छोटी मेज़ ला! फूल काहे पर रखे जायेंगे!

(पिता और कैलाश आगन्तुकों का स्वागत करने बाहर जाते हैं। उर्मिला

झपट कर तिपाई लाती है। चेतन उर्मिला के हाथ से तिपाई लेकर बिछे हुए कालीनों के पास रख फूलदान में फूलों को सँवारने लगता है)

चे०—(फूल सँवारते हुए) इसके मन में कैसे लड्डू फूट रहे हैं ! बड़ी बहिन की शादी हो जाय तो यह घर की बड़ी समझी जाने लगे, क्यों ?

उ०—और नहीं तो क्या ? फिर आप मुझे पढ़ायेंगे न ?

चे०—(सोचते हुए) तुम्हें ?... मैं जिसे पढ़ाता हूं, उसकी शादी जल्दी हो जाती है !

उ०—एहे, ! बड़े आए। हम करेंगे ही नहीं शादी ।

(कैलाश और उस के पिता मेहमानों को रास्ता दिखाते हुए भीतर लाकर कालीनों पर रखे हुए गाव तकियों के समीप बैठने का आग्रह करते हैं। मेहमानों में पं० रामनाथ लगभग कैलाश के पिता की आयु के हैं। उनके साथ पं० ज्ञानचन्द लगभग चालीस वर्ष की आयु, कुर्ता-धोती पहने और अंडी की चादर ओढ़े हुए हैं। संभावित वर, उनके छोटे भाई नवयुवक धर्मचन्द चुस्त अचकन और चूड़ीदार पाजामा पहने हैं। ज्ञानचन्द की स्त्री एक बढ़िया रेशमी साड़ी पहने हैं। रूपवती नहीं कही जा सकतीं परन्तु ठसक ज़रूर है। वे काफ़ी गहना पहने हैं।

अतिथियों और अतिथि सत्कार करने वालों में तकियों के पास बैठने में पर्याप्त तकल्लुफ़ हो जाने पर अतिथियों को आदर से तकियों के पास बैठा कर कैलाश और उसके पिता नीचे हट कर बैठते हैं। कैलाश चेतन को भी संकेत से बुला कर अपने पास बैठा लेता है।)

पिता—(दाएँ दरवाज़े की ओर देखकर) उर्मिला बेटी, अपनी माता जी को बुलाओ न !...बहिन जी आई हैं।

राम०—(ज्ञानचन्द की ओर संकेत कर) आप पं० ज्ञानचन्द जी हैं। आप से तो चर्चा हुई थी न ?.... आप इलाहाबाद हाईकोर्ट में पेशकार हैं। क्या कहना !...बड़े ही सज्जन

पुरुष हैं। इलाहाबाद में बड़े-बड़े वकील, बैरिस्टर सब लोग आपकी प्रशंसा करते हैं।....बहुत ही भले आदमी हैं।

पिता—(हाथ जोड़ ज्ञानचन्द को नमस्कार कर) जी हाँ, आपकी बहुत प्रशंसा सुनी थी। भगवान भला करें, दर्शन करने का सौभाग्य आज हुआ। (दुबारा हाथ जोड़ कर) बहुत आनन्द हुआ।

राम०—(कैलाश के पिता की ओर संकेत कर विनय की हंसी से) अकाउन्टेन्ट साहब!

ज्ञान०—(प्रत्युत्तर में हाथ जोड़कर) जी, यह तो हमारा सौभाग्य है। (रामनाथ की ओर संकेत कर) पंडित जी की कृपा से आप के दर्शनों का अवसर मिला।

राम०—(ज्ञानचन्द की ओर संकेत कर) इनका तो धर्म ही है, लोगों की सहायता और सेवा करना। नहीं तो आप जानते हैं, अदालतों का तरीका! पर इन की तो बात ही दूसरी है। इनके हाथों कभी किसी का अनिष्ट नहीं......

पिता—(उन्हें टोककर) जी हां, जी हां, सज्जनों का तो ऐसा ही स्वभाव होता है।

ज्ञान०—(हाथ जोड़ कर) जी, मैं किस लायक हूँ? आप लोगों की दया से जो बन पड़ता है, सेवा करने का यत्न करता हूँ।....यह सब तो ईश्वर की दया है। मनुष्य बेचारा क्या कर सकता है!

राम०—(कैलाश के पिता से) ऐसे सज्जनों का सत्संग और सम्बन्ध तो भगवान की दया से ही मिलता है हरप्रसाद जी! जैसे आपका परोपकारी स्वभाव है, बस वैसे ही ज्ञानचन्द जी को समझिए। बस, समझ लीजिए बिलकुल!...मैंने सोचा कि सज्जनों का सज्जनों से

ही सम्बन्ध हो, तभी भगवान की इच्छा पूर्ण होगा। हरे कृष्ण ! हरे गोविन्द ! (मूछों पर हाथ फेरते हुए।)

(कैलाश की मा पुरानी धोती बदल रेशमी साड़ी पहिन कर आती ह और ज्ञानच द की स्त्री सरक कर उनके लिये स्थान करती हुई)

ज्ञा० स्त्री—"राम राम बहन जी !"

दोनो समाप ही बैठ जाता हैं।

राम०—(कैलाश की माँ से ज्ञानच द की स्त्री की ओर सकेत कर) आप ज्ञानचन्द जी के छोटे भाई धर्मचन्द जी की भाभी हैं। बड़ा दया का स्वभाव है।

मा—(हाथ जोडकर) राम, राम, बैठिये, बैठिये बहन जी।

मा—(हाथ जोडकर) बड़ा आनन्द हुआ बहिन जा आपके दर्शन स

भा०—(रामनाथ का बात समाप्त हुये बिना ही) नही, बहिन जी नहीं, आपके दर्शनों की हम ता बडी इच्छा थी। बहिन जी, आपकी बहुत तारीफ सुनी थी।

मा० —(आग्रह मे सिर हिलाते हुये और रामनाथ तथा ज्ञानच द का स्त्री की बात काटते हुय) नहीं भैन जी, हम किस लायक हैं ? आपके दर्शन से बड़ा आन द हुआ।

राम०—(कैलाश की माँ की ओर सकेत कर) आप कैलाश की मा हैं। बस अन्नपूर्णा हैं ! देवी समझिए ! (धमच द की ओर सकेत कर) आप हैं धमचन्द जी, ज्ञानचद जा के छोटे भाई। वकालत पास कर रहे हैं।

ज्ञान०—हा, (हाथ उठाकर) भाई साहब, मैंने कहा, नौकरी क्या करोगे ? नौकरी की भी कोई जड होती है ?

पिता—(समथन में हाथ फैलाकर) जी नहीं, भगवान भला करे,

नौकरी की भला क्या जड़ हो सकती है ? अब देखिए नौकरी करते करते मेरी यह उमर हो गई, फिर भी क्या है ? एक उमर में आकर आदमी को रिटायर भी तो होना पड़ता है।

पिता—जी हां, जी हां, अपना भी तो यही हाल है। नौकरी का क्या भरोसा ? ठीक कह रहे हैं आप। इसलिए मैंने कहा, इलाहाबाद में तो सभी लोग जान पहचान के हैं, यह वकालत कर ले

राम०—(उत्साह से बात काटकर) अजी, आपकी बदौलत इलाहाबाद की अदालतें तो इनकी अपनी ही समझिये। वरना तो (कैलाश के पिता से) भाई साहब वकीलों का भी आप जानते हैं जो हाल है ?

पिता—(समर्थन में गर्दन ऊंचा कर) जी कुछ न पूछिये। वकीलों का तो बहुत बुरा हाल है।

राम०—लेकिन (ज्ञानचंद की ओर संकेत कर) इनके लिए तो वकालत जमी जमाई समझिए। (ज्ञानचंद की ओर संकेत करके) इनके कहने को कौन मुवक्किल उपेक्षा कर सकता है ?

पिता—जी हां, यह तो है ही। भगवान भला करे, भले आदमियों का तो ऐसा ही कायदा है पंडित जी ! (कैलाश से) बेटा कैलाश, कुछ चाय तो मंगाओ। बहन से कहो, चाय भिजवाये।

राम०—(दोनों हाथों से इंकार करते) न न न न ! कोई आवश्यकता नहीं। यह कष्ट न कीजिए। चाय की बात रहने दीजिए। पीकर ही आ रहे हैं। (ज्ञानचन्द की ओर) क्यों भाई साहब ?

पिता०—तो शर्वत लीजिये !

ज्ञान०—(उसी प्रकार हाथ हिला कर) ऊ हूँ, ना ना ! कष्ट न कीजिये। अभी पी के ही आ रहे हैं, क्या रामनाथ जी, अभी तो (विनय से हसकर) कष्ट न कीजिये।

पिता०—हैं, हैं, (प्रत्युत्तर में हस कर) कष्ट? कष्ट की क्या बात है? ऐसे ही जरा थोड़ी सी चाय, चाय क्या? बस नाम ही है।

क०—उर्मिला ! (भीतर जाते हुए) जरा चाय तो ले आओ!

माँ०—(उठती हुई) देखिये भैन जी, मैं भिजवाती हूँ। एक मिनट में। (भीतर जाता है।)

राम०—चाय का तो आप भाई साहब व्यर्थ कष्ट कर रहे हैं। आपके तो दर्शन ही से इतना सुख प्राप्त हो जाता है। बाबू ज्ञानचंद अपने पुराने मित्र हैं। यहाँ कुछ जमीन लेकर मकान बनवाने का इरादा कर रहे थे।

पिता०—(समर्थन में माँ उठाकर रखते हुये) बहुत ठीक, बहुत ठीक, पण्डित जी मैं तो कहता हूँ जमीन जायदाद ही असली चीज

राम०—(बात सुनने की प्रतीक्षा किये बिना) भाई धर्मचंद भी साथ थे। ऐसे अवसर पर सोचा कि आप लोगों से परिचय हो जाय। (हंस कर) क्यों ज्ञानचंद जी?

पिता०—बड़ी कृपा की आपने हम लोगों पर। बड़े सौभाग्य से सज्जनों के दर्शन होते है।

ज्ञान०—यह तो हमारा ही सौभाग्य है। बहुत प्रशंसा आपकी सुनी थी। दर्शन की बहुत इच्छा थी पर

राम०—और यह बात भी हुई थी आप से (ज्ञानचंद की ओर संकेत करके) कि अपनी लड़की बी० ए० में पढ़ती है।

बहुत ही सुशील है। यह समझिये (ज्ञानचन्द की ओर घूम कर) ज्ञानचन्द जी, कि कालिज में पढने वाली लडकिया जैसी होती है, (हाथ हिलाकर) वह बात बिलकुल नहीं। बहुत ही सीधी! यो समझिए! घर का सब कामकाज करती है।

भावी—हा, हाँ जी, भले घरा में ऐसा न हो तो कैसे चले?

राम०—(बिना रुके बोलते जाते हैं) वैसे तो ईश्वर की दया स हरप्रसाद जी के घर में नौकरो की कमी नहीं

ज्ञान०—(हाथ उठाकर) जी हा, जी हा, वाह यह तो है ही!

राम०—परन्तु लडकिया एसी सुशील है कि सब काम अपने हाथ से करती है। भोजन तो आपके घर में अमृत होता है। लडकिया ही बनाती हैं।

ज्ञान०—शरीफ घरों का तो कायदा ही है। अपने ब्राह्मण परिवारों का यही चलन चला आया है। भाई साहब, नौकरों क हाथ की रसोई भला कोई रसोई होती है?

राम०—नौकरो के हाथ की रसोई तो गले के नीचे नहीं

पिता०—यह तो आप लोगों की दया है। परन्तु भगवान भला करें, कैलाश की माँ ने तो बचपन से ही लडकियो को घर सभालने की शिक्षा दी है। उस विचारी की तो आप जानते हैं भगवान भला करे, सेहत ही ठीक नहीं रहती। लडकिया ही सब घर सभालती हैं।

राम०—हा, हा, इसीलिए तो सोचा कि ज्ञानचन्दजी आए हुए थे और धर्मचन्द भी सौभाग्य से साथ थे। समझिये न, स्वर्ण अवसर! आप लोग जानते हैं कि अच्छे सम्बंध मिलते कहाँ हैं? आप लोग आये है तो ऐसे अवसर पर कुछ बात चीत ही हो जाये। हा और क्या?

(मा और लड़कियें चाय का साम न लिये आती हैं। सुमित्रा एक अच्छा, मूता किनारेदार बादामी रग की साड़ी पहने हुए आती है। उसका चेहरा गम्भीर और झुका हुआ है। चेहरे पर पाउडर या सुर्खी कोई चीज नहीं है। उर्मिला रेशमी साड़ी पहने है।)

राम०—(सुमित्रा की ओर संकेत कर ज्ञानचन्द से) ये हैं बेटी सुमित्रा, कैलाश की बहिन। बहुत ही गौ लड़की है, पण्डित जी! ये उर्मिला है, छोटी बहिन। (उर्मिला से) कहो बेटी उर्मिला, कौन सी जमात म पढ़ रही हो?

उ०—(लज्जा से सिर झुका कर) नाइन्थ में।

राम०—कौन से स्कूल में पढ़ती हो बेटी?

पिता०—यह तो जुबली गर्ल्स हाई स्कूल में पढ़ती है।

राम०—बेटी सुमित्रा तो कालिज में पढ़ती है न? (सुमित्रा सिर झुकाये चुप रहती है।)

मा०—जी हा, एफ० ए० पास कर लिया है। बी० ए० में दाखिल होने के लिए कहती है। इसके पिता जी कहते हैं, पढ़ ले। (सुमित्रा से) बेटी, चाय तो बनाओ।

(उर्मिला तश्तरियों म फल और मिठाई रख कर मेहमानों के सामने रखने लगती है। सुमित्रा प्यालों में चाय बना बना कर सब लोगों के सामने रखती जाती है। इस बीच मेहमानों और यजमानों में आप लीजिये पहले आप कह कर विनय प्रदर्शन होता रहता है)

राम०—बहुत अच्छा है! विद्या का क्या कहना? सबसे बड़ा धन समझिये!

ज्ञान०—हा जी, ऐसा तो होना चाहिए। शिक्षा बड़ी चीज है।

पिता०—जी हां। मैंने भी कहा, शिक्षा तो जरूरी है ही। भगवान भला करे, शिक्षा के बिना तो आप जानते हैं, लड़का हो

या लडकी, मनुष्य नहा बन सकता और अब जैसा जमाना आ गया है उसमें तो शिक्षा न होने से निर्वाह हा नहीं हो सकता (रामनाथ को ओर देखता है) क्यों पडित जा ?

मा०—(ज्ञा० स्त्री की ओर देखकर) पर बहिन जी, लडकियों की पढ़ाई का खर्च भी कितना हो जाता है ? आप जानती हैं, लडकों से भी ज्यादा ! लडकियों से तो लडकों का पढाना आसान है।

भाबी०—अरे हाँ, बहिन जा। क्या कहे ? लडको का क्या ? पैदल स्कूल चले गये। दूर हुआ, एक साइकिल ले दी। पर लडकियों के लिए स्कूल आने जाने का खर्च ही सबसे बडा खर्च हो जाता है। हमारी लडकी तो स्कूल की मोटर मे स्कूल जाती है। लडकियो को पैदल कैसे

मा०—हां बहिन जी हां हमारी लडकिया भी स्कूल की लारी मे जाती है। हमीं जानते हैं कि कितना झंझट होता है। लडका की क्या है बहिन जी।

राम०—यह तो है ही। लडकों और लडकियो में तो भई फर्क है ही। लडकों की बात तो दूसरी है। लडकिया की तो विशेष चिन्ता करनी ही पडती है।

पिता०—ठीक कह रहे हैं पण्डित जी। भगवान भला करें, घर भी तो लडकी की ही बुद्धि से चलता है न ?

राम०—बहुत ठीक, बहुत ठीक कहा अकाउण्टेण्ट साहब ने। घर तो लडकी की ही बुद्धि से चलता है। (ज्ञानचन्द से) क्यों पडित जी ?

ज्ञान०—निस्सन्देह ! निस्सन्देह ! ठीक कहते है आप। ठीक हा

कहा अकाउण्टेंट साहब ने घर तो गृहिणी से ही होता है। पंडित जी घरवाली को सलीका हो तो आदमी के दस ऐब भी छिप जाते हैं और अगर घर वाली फूहड़ हो तो आदमी हजार कमा कर लाए घर कभी पनप नहीं सकता।

राम०—(टोक कर) वाह! वाह! क्या बात कही पण्डित जी ने! स्त्री फूहड़ हो तो घर बिलकुल बरबाद हो ही जायगा!

पिता—यह चाय ठण्डी हो रही है

ज्ञान०—ना, यह तो अकाउन्टेन्ट साहब, आपने बहुत कष्ट किया।

पिता—नहीं नहीं, कष्ट क्या, यह तो हम लोगों का सौभाग्य है। आपके चरणों की धूल, भगवान भला करें, इस घर में बनी रहे। हैं, हैं, लीजिये न, (समोसों की तश्तरी बढाते हुए रामनाथ से आग्रह कर) लीजिये न पंडित जी!

राम०—(समोसे लेकर चाय के प्याले से घूंट भरते हुये) यह तो आपने बड़ी पक्की बात कही पंडितजी। तभी तो हमारे शास्त्रों में स्त्री को देवी कहा गया है और कहा है कि घर के धर्म की रक्षा स्त्री से ही होती है।

पिता—जी हां, जी हां, धर्म की रक्षा तो स्त्रियां ही करती हैं।

राम—(प्याला नीचे रख कर हाथ उठा कर) देखिये न, हमारे धर्म में धरती को ही माता कहा गया है, सब नदियों को माता कहा गया है। हमारे हिंदू धर्म में तो स्त्री को माता ही माना गया है। (हाथ ऊँचा उठा कर) और तभी तो स्त्री को धर्मपत्नी कहा गया है क्योंकि धर्म का पालन करती है।

भाबी—(चाय का प्याला नीचे रखते हुए) इनके कालिज मे गाना भी तो सिखाया जाता होगा ?

माँ—हाँ बहिन जी, गाना सिखाने के लिए तो हम लोगों ने सूरदास गुरू जी को रखा हुआ था। हरमोनिया बाजा भी है। दोनों लड़कियां गाना सीखती रहा हैं। इन्हे तो कई दफा गाने में स्कूल स इनाम मिला है।

(चाय के प्याले खाली होने पर सुमित्रा उ हें भरती जाती है। उर्मिला मिस तश्तरी में जो चीज समाप्त होती देखती है, रखती जाती है।)

राम०—(अपनी तश्तरी में और समोसे रखे जाने पर) ना ना, बेटी क्या कर रही हो ? (हरप्रसाद को सम्बोधन कर) पंडित जी, यह तो आप बहुत कष्ट कर रहे हैं

पिता—भगवान भला करें, इसमे है ही क्या ? लीजिये न इतना तो और लीजिये !

ज्ञान०—(अपना प्याला ढकने के लिए आगे बढाया हाथ पीछे हटाते हुये) बस क्षमा कीजिये अकाउण्टेण्ट साहब, मेरा तो मेदा यो ही कमजोर रहता है

मा०— (ज्ञान चन्द्र की स्त्री से) आप लीजिये न बहिन जी, (उर्मिला उसकी तश्तरी में मिठाई) रख देती है।

भाबी—न, न, बहिन जी, बस, बस ! हाँ बहिन जी, लड़कियों के स्कूल कालिजों में तो यह सीने पिरोने, बुनने बुनाने का काम भी तो सिखाया जाता है ? क्यों बहिन जी !

माँ—हाँ हां, बहिन जी, हम लोगों के घर की लड़कियाँ यह काम भला न सीखें, यह कैसे हो सकता है ? (बीच में बिछे बढिया कढे हुए मेजपोश की ओर संकेतकर) देखिये, यह सुमित्रा का ही तो काढ़ा हुआ है।

राम०—(मेजपोश की ओर देख) वाह, वाह ! बहुत सुन्दर ! (ज्ञानचंद का ध्यान मेजपोश की ओर आकर्षित कर) देखा आपने ? देखिये तो !

ज्ञान०—(हाथ का प्याला तश्तरी में रख, मेजपोश को ओर ध्यान से देखकर) क्या कहना साहब ! बहुत खूब ! क्या बारीक काम है। बहुत ही सुन्दर। बहुत ही सुन्दर ! किसने बनाया है।

मा—(हाथ फैला कर) यह तो कुछ भी नहीं। सुमित्रा तो बहुत बढ़िया काम करती है। बढ़िया चीज तो रखी रहती है, कभी लेने देने के काम आयेगा। मुहल्ले भर की लड़कियाँ इसे घेरे रहती हैं। सबको नये नये ढंग के स्वेटर और मोजे बुनना सिखाती रहती है। जाने कितनी ऊन जाड़ों में लाई और बना बना कर बाँटती गयी

राम०—(टोककर) ठीक है ठीक है, माता पिता का असर होता है न सन्तान पर।

मा—(बिना रुके) और खुद कुछ नहीं पहनती, चाहे कितना ही समझाओ। कहती है, जाड़ा ही नहीं लगता।

राम०—ठीक है, ठीक है। हमने कहा न, कुल का असर कहीं जा सकता है ? वो तो होगा ही ?

(अपनी बाबत बहुत बात चलती देख सुमित्रा संकोच से उठकर भीतर चली जाती है। उर्मिला भी उसके पीछे चली जाती है।)

भाबी—बेचारी, कितनी शर्मीली है ?

राम० —(कैलाश की मा से) यह तो होगा ही। भले लोगों की सन्तान भी तो भली ही होती है। भई माँ बाप जिस ढंग पर चलेंगे, सन्तान भी तो वही रास्ता पकड़ेगी।

पिता०—यह तो आप लोगों की गुणग्राहकता है। भगवान भला करें, वरना हम लोग किस लायक हैं ? (रामनाथ से आरस चार होने पर उनकी ओर जिज्ञासा मे कुछ त्रण देखकर) पडित जी क्या इलाहाबाद आज ही चले जाएंगे ? कुछ दिन तो ठहरते। आपके दर्शन से तो बडा आनद हुआ।

राम०—(ज्ञानचन्द की ओर देखते हुए) हाँ, पर इन्हें फुर्सत ही कहाँ मिलती है ? बरसों बाद आ पाये हैं। हम तो कब स लिख रहे थे (ज्ञानचन्द की ओर झुकते हुए) पडित जी, क्या विचार है ? क्या जाकर वहा से लिखियेगा ?

ज्ञान०—(अपने घुटने पर दोनों पजे बाधते हुए) हाँ, जाकर भी हो सकता है। (अपनी पत्नी की ओर देख कर) सभी बात देखी जाती हैं न ! (धमचद की ओर देख कर) और भई इस जमाने में तो आप जानते हैं, पहले तो लडकों से ही पूछना जरूरी होता है। हम लोगों की बात तो खैर उसके बाद ही हो सकती है।

(कैलाश के पिता बारा बारी स ज्ञानच द और रामनाथ की ओर देखते हैं।)

राम०—(गर्दन हिला कर) पण्डित जी ठीक ही कह रहे हैं। बात तो असली लडके की ही पसन्द की है। पर भले घरा के लड़के भी अपने बडों क कहने के बाहर कैस जा सकते हैं ? भाई, ऐसा सीधा लडका नहीं देखा। बहुत गौ स्वभाव है।

पिता०—(हामी भरने के लिए) जी हा, भगवान भला करे, भाई साहब (ज्ञानच द की ओर सकेत कर) के ही गुण पाये हैं न ?

राम०—और धर्मचन्द बाबू के तो आप ही लोग हैं। भाई भाभी हैं तो और माता पिता हैं तो। (ज़रा गर्दन सीधी करके) पण्डित जी, ऐसी बातें चिट्ठी पत्रों से कहाँ चल सकती हैं? इन बातों में तो आमने सामने बात हो जाना ही अच्छा रहता है। भले आदमियों में तो बात का ही मोल होता है। (हरप्रसाद की ओर देख कर) क्यों अक्का उन्टेंट साहब?

भाबी—(सिर पर आंचल सम्भालते हुये, कुछ आगे खिसक कर) देखिये, लड़का ही जब तक कुछ न कह दे! उससे तो पूछना ही होगा न?

पिता—(संकेत समझ कर) हाँ हाँ कैलाश की माँ, पान नहीं लाई लड़कियां? (कैलाश से) बेटा, देखो तो जरा। पान नहीं भेजे लड़कियों ने।

(कैलाश और चेतन दोनों उठ कर बाहर चले जाते हैं।)

माँ—(ज्ञानचन्द की स्त्री को) अभी आती हूँ बहिन जी! (आश्वासन देकर दायीं ओर से भीतर चली जाती है)

पिता—एक मिनट (उठ जाते हैं।) भगवान भला करे, अभी आया!

भाबी—(आगे खिसक कर धर्मचन्द से) कुछ कहो तो? (मुस्कराती है।)

धर्म०—मैं क्या कहूँ? आप लोग जो कहें!

भाबी—(अपने पति से) लड़की सुशीला तो जरूर है, पढ़ी लिखी भी है ही, पर भई (मुँह बनाते हुए) चेचक के दाग बहुत गहरे हैं।

राम०—अब यह सब तो है ही लेकिन लड़की का गुण देखिये! (रहस्य के स्वर में) चेहरे की ही वजह से तो इतनी रकम

दे रहे हैं ये लोग। पण्डित जी, ऐसी लड़की लाखों परिवारों में कहीं एक होती है।

(नौकर एक चांदी की तश्तरी में पान दे जाता है।)

ज्ञान०—वमचन्द को पसन्द भी तो हो! (रामनाथ की ओर देख कर) लेन देन की बात आप से क्या हुई थी?

राम०—(हाथ उठाकर पंजा दिखाते हुए) पाँच हजार की बात मुझ से हुई थी। हरप्रसाद घर के पोढ़े हैं। दानदहेज में कंजूसी करने वाले नहीं हैं।

भावी—(मुँह में पान रखते हुए) दानदहेज तो चलता ही है। उस में कोई ठहराव की बात थोड़े होती है। पर ठहरावा भी तो देखा जाता है।

राम०—(समीप खिसकते हुए रहस्य के स्वर में ज्ञानचन्द को समझाते हुए) तुम पाँच हजार और दहेज पर मत जाओ! आदमी पैसे से नहीं जाँचा जाता! पैसा तो हाथ का मैल है, भैया पण्डित जी! आदमी का गुण बड़ी चीज होती है। लड़की एफ० ए० पास है। दो बरस में बी० ए० हो जायगी। बी० ए० ही समझो! प्राइवेट कर ले! घर में बी० ए० पास बहू का होना मामूली बात नहीं, पंडित जी! परमेश्वर के मन की बात कोई नहीं जानता! परिवारों में सब तरह के समय आते हैं, हाँ! बी० ए० पास बहू को एक बी० ए० पास आदमी समझो!

ज्ञान०—(मुँह में भरे पान को सम्भालने के लिये मुँह ऊपर उठा कर) सो टो हम समझटे हैं पडिट जी, पर भाई ठहराव की भी टो बाट है।

राम०—सोचो कितना तो खर्च हो गया होगा उसकी पढ़ाई पर? (ज्ञानचन्द का हाथ थाम कर) और क्या? तुम्हें तो

बी० ए० पास आदमी मिल रहा है। अरे एफ० ए० तो है ही, बी० ए० ही समझो! उस में क्या अन्तर है?

भाबी—उस में क्या है? हमें कौन बहू से नौकरी करानी है? (मुँह बिचका कर) चेहरा ऐसा है कि अब पाँच हजार कम हैं। गुण तो हुआ, पर रूप भी तो कोई चीज होती है। (अपनी ठोडी छू कर दिखाते हुए) गुण तो कोई कब देखेगा? पहिले तो लडकी का रूप ही देखेगा। नहीं तो घर बैठे इतनी उम्र कैसे हो गयी? लोग यही तो देखते होंगे! यह लोग अठारह की बता रहे हैं, बीस से एक कम नहीं, ज्यादा चाहे हो! शर्त बदती हूँ!

ज्ञान०—(समर्थन में सिर हिलाकर) हाँ भाई, सभी कुछ देखा जाता है।

भाबी—छोटी बहिन की बात होती तो हम कहते, पाँच हजार ही सही। बड़ी की शादी यूँ ही थोड़े हो जायगी। हम तो दस से कम नहीं मानेंगे। सच्ची बात है!

राम०—(ज्ञानचन्द्र से) तो बात की जाय! लेनदेन की बात तो ऐसे ही तय होती है भाई! कुछ वे मानेंगे, कुछ आप कम करेंगे लेकिन (दोनों हाथ उठाकर) लेकिन लडकी में ऐसा गुण नहीं मिलेगा! हाँ, बात तय हो जाय। इन की भी चिंता मिटे और आप लोगों को भी निश्चय रहे।

भाबी—(ज्ञान से) आप तो दस ही कहिए।

राम०—(हाथ से इशारा करते हुए) जो हरि इच्छा हो, जो तय हो जाय, आप लोगों में! हम तो यह जानते हैं कि ईश्वर की कृपा से दो भले परिवारों का सम्बन्ध हो

जाय, यही बडी बात है। (गर्दन ऊची करके) उर्मिला बेटी! कैलाश बाबू!

(अपना नाम सुनते ही कैलाश तुरंत सामने आ जाता है। वह किवाड की आट में ही खड़ा था। उसके पीछे अपने दोनों बाजू सीने पर बाधे चेतन भी उसके साथ आ खडा होता है। वह दाँतों से अपना निचला होंठ काट रहा है माना अपने क्रोध को दबाने का यत्न कर रहा है।)

कै०—(रामनाथ की ओर देख कर) कहिये ?

राम०—(पालथी मार अपने दोनों घुटनों पर हाथ रख पीठ को सीधा करते हुए) कैलाश बाबू, अकाउन्टेंट साहब को बुलाओ न भाई, आज्ञा लें। आप बहुत देर हो गयी है।

कै०—(क्रोध में अपने पिता के आ जाने के कारण चुप रह जाता है)

(कैलाश के पिता आकर बैठ जाते हैं।)

पिता—अभी जल्दी क्या है? बैठिये तो।

राम०—(उनकी ओर सरक कर) भई देखिये, और तो सब ठीक है अकाउन्टेंट साहब, पर हाँ पेशकार साहब का कहना है कि लेनदेन की बात तो नहीं है परन्तु जैसा जग का व्यवहार है आपका घर है; इनका घर है वैसे तो दस हजार कहते हैं। (विवशता में अपने दोनों हाथ फैलाते हैं।)

(हरप्रसाद के चेहरे पर मानसिक आघात के चिह्न दिखाई देते हैं। उनकी आँखें और होंठ खुले रह जाते हैं और हाथ ढाले पड़ जाते हैं।)

कैलाश चेतन को कुहनी से संकेत करता है। चेतन उसकी ओर देख उसी प्रकार कुहनी से संकेत करता है मानों कह रहा हो पहले तुम)

पिता—(एक गहरी साँस ले घुटने पर रखी कोहनी की हथेली पर चिन्ता से अपना सिर टिकाकर) भगवान भला करे।

कै०—(क्रोध में आगे बढ़कर) दस हजार किस बात के ? लड़की को पसन्द करने का दाम माग रहे हैं आप ? क्या लड़की के कुरूप होने का हर्जाना चाहिये आपको ?

(सब लोग भौंचक कैलाश की ओर देखने लगते हैं। सहसा सुमित्रा कमरे में आ कैलाश के सामने खड़ी हो जाती है)

सु०—(किसी की ओर न देख, सिर झुकाये परन्तु कड़े स्वर में) आप लोग मेरी कुरूपता का हर्जाना ले कर मुझे पसन्द कर लेना चाहते हैं ? परन्तु मुझे तो लड़का पसन्द नहीं।

(सभी लोग विस्मय में आँखें खोले और मुँह बाए रह जाते हैं। सुमित्रा एक ओर हट कर खड़ी हो जाती है। ज्ञानचन्द,, रामनाथ धर्मचन्द और उसकी भाभी सब उत्तेजना में खड़े हो जाते हैं। केवल कैलाश के पिता सुधबुध खोये बैठे रह जाते हैं। ज्ञानचन्द, उनकी स्त्री रामनाथ और धर्मचन्द के चेहरे क्रोध से फूल जाते हैं।)

ज्ञान०—(रामनाथ और हरप्रसाद की ओर देखकर क्रोध में) हमारा इस प्रकार अपमान करने के लिये ही आप लोगो ने हमे बुलाया था ?

चे०—(आगे बढ़कर) इसमें आप लोगों का कोई अपमान नहीं है। आप ही लड़की को पसन्द करेंगे ? लड़की नहीं लड़के को पसन्द करेगी ? आप लड़की के चेचक के दागों के कारण कुरूपता का हर्जाना मागते हैं तो इस घर का अपमान नहीं है ? लड़की आपको कुरूप जान पड़ती है। लड़की को लड़का बेवकूफ मालूम होता है।

राम०—(क्रोध में) तुम कौन हो बीच में बोलने वाले ?

कै०—(आगे बढ़कर) इ ह इस घर की तरफ स सब कुछ कहने का अधिकार है। यह मेरा भाई है।

ज्ञान० —(क्रोध में पाँव पटकते हुए और चुनौती के लिए हाथ उठा कर) तुम लोगों ने हमारा जो अपमान किया है, इसका वो बदला दूँगा (मूछों पर हाथ फेरते हुए) सात पीढ़ी में भी अगर इस घर की लड़कियों की शादी कहीं हो जाय तो मेरा नाम ज्ञानचन्द

कै०—(आस्तीनें चढ़ाते हुए) जबान सम्भालो चुप।

च०—(कैलाश को बाँह से पीछे खींचकर और ज्ञानच द को हाथ स बरामदे की ओर संकेत करते हुए) Get out! इस घर की लड़कियों की बाबत एक भी श द कहा तो जबान खींच ली जायगी। लड़कियों के बापों का खून पीने वालो तुम्हारी खबर ऐसी लड़कियाँ ही लेंगी।

राम—(बरामदे की ओर बढ़ते हुए चुनौती देने के लिये उ गली दिखा कर) याद रखना, हरप्रसाद!

(ज्ञानचन्द, वमच द, रामनाथ और ज्ञानचन्द की स्त्री पाँव पटकते हुए चले जाते हैं। परेशानी की अ यवस्था में कैलाश की माँ कमरे में आती है।)

मा—(हाथ और मु ह फैलाये) क्या हुआ? हाय राम जी, क्या हुआ? क्यों चले गए वे लोग? (दोनों हाथ सिर पर मार कर) हाय! मेरी लड़की का क्या होगा?

पिता—(मानसिक आघात की मूर्छा से जाग उठते हैं और बाहें फैला दरवाजे की ओर लपकते हुए चिल्लाते हैं) भाई रामनाथ जी! पंडित जी! पेशकार साहब! अरे सुनिए!

कै०—(पिता के सामने आ उनका रास्ता रोक लेता है) यह क्या कर रहे हैं आप ? (पिता को चिल्लाते रहते देख कड़े स्वर में) क्यों आप अपनी बेटी का और अपना अपमान कराना चाहते हैं ?

पिता —(सिर पर हाथ मार कर) तुम लोगों ने सर्वनाश कर डाला ? मैं क्या सारी उमर लडकियों को अपने सिर पर बिठाये रखूँगा ? कैसा कपूत मेरे घर में पैदा हुआ जिसने मेरा लोक परलोक बिगाड दिया।

कै०—(तीखे स्वर में) सिर पर बैठा रखने का क्या मतलब ? क्या आपकी लड़की का अपमान करने वाले का पेट अपने खून से भरने से, लडकी को कुरूप बता कर हजाना माँगने वाले को खुश करने से आपका धर्म पूरा होगा ? किस बात के दस हजार रुपये मांगता है वो ? रुपया मिल जाने से लडकी खूबसूरत हो जायगी ? रुपया हजम करके वो लोग लडकी से क्या बरताव करेंगे ?

पिता—(क्रोध में उबलकर) रुपये के लालची ! तुझे रुपये की फिकर है ? रुपये के लोभ में तूने दरवाजे पर आए लड़की के वर को ठुकरा दिया ? (धमकी देने के लिए हाथ उठाकर) कौन है तू मेरी सम्पत्ति के बारे में बोलने वाला ? मैं घर में आग लगा दूँगा ! याद रख ! यह मेरी कमाई है। मैं दस हजार नहीं, बीस हजार दूँगा ! मैं मकान बेच कर लड़की का ब्याह करूँगा। रुपये के लालची, तूने रुपये के लोभ में मेरा लोक और परलोक बिगाड़ा। निकल जा मेरे घर से (दरवाजे की ओर संकेत कर क्रोध में काँप उठते हैं)

कै०—(प्रत्युत्तर की उत्तेजना में) मैं लात मारता हूँ इस सम्पत्ति और मकान को! परन्तु सुमित्रा मेरी बहिन है। जो उसका अपमान करके, इस घर का कूड़ा समेटन के लिए, इस घर का पाप धोने के लिए हरजाना मांगेगा, उसे इस घर में पाँव नहीं रखने दूँगा। (और भी क्रोध में) यदि सुमित्रा इस घर को भारी है तो वह भी मेरे साथ जायेगी। हम मजदूरी करके अपना पेट पाल लेंगे परन्तु मैं अपनी बहिन का अपमान नहीं होने दूँगा।

(सुमित्रा झपट कर कैलाश के सामने आ जाती है। उसकी आँख क्रोध से लाल हैं और शरीर काँप रहा है।)

सु०—(कड़े स्वर में पिता और माँ से) भैया को घर से निकालने की क्या जरूरत है? मैं इस घर के लिये इतना बोझ हूँ। मैं स्वयं इस घर में नहीं रहूँगी।

पिता—(परेशानी में दोनों हाथों से सिर दबाकर) तुम सब पागल हो! तुम मुझे पाप में घसीटना चाहते हो। तुम मेरे घर में कुवाँरी लड़की बैठाये रख कर मुझे नरक में घसीटोगे! तुम्हीं लोग रहो इस घर में। मैं इस घर को लात मारता हूं। इस घर को आग लगाता हूँ। मैं ही इस घर में नहीं रहूँगा। तुम लोगों ने मेरी औलाद हो कर मेरे साथ जो अन्याय किया, भगवान तुमसे समझे! लो, तुम्हीं रहो! मैं जाता हूँ

(घर छोड़ने के इरादे से दरवाजे की ओर बढ़ते हैं)

माँ—(सिर पीट कर चिल्ला उठती है) हाय राम जी, क्या हो गया तुमको? कहाँ जा रहे हो तुम? मेरा घर उजाड़ने

वालो तुम्हारा नास हो (लपक कर कैलाश के पिता के कुर्त का आचल खींचती हुई चीख चीख कर रोती है।)

चे०—(कैलाश के पिता के सामने आकर गम्भीर परन्तु ऊँचे स्वर में) आप यह क्या कर रहे हैं? जो आपकी लडकी का अपमान करे, क्या वही आपकी लडकी का वर हो सकता है? जो रुपये के लालच में आपकी लडकी का निरादर करे, वही आपकी लड़की का वर हो सकता है? जो आपकी लडकी का देवी के समान आदर करे, उस पर श्रद्धा करे, व वह उसका वर नहीं हो सकता?

(कैलाश के पिता और मा विस्मय से आँखें और हाथ फैलाये एक दूसरे की ओर देखने लगते हैं। कैलाश चेतन की बात समझने के लिये उसकी ओर एक कदम बढ आता है। सुमित्रा अपने स्थान पर खड़ी विस्मय से उसकी ओर देखती है परन्तु उसकी कठोर मुद्रा में कोई परिवर्तन नहीं होता।)

कै०—What do you mean? क्या कह रहे हो? किस वर की बात तुम कर रहे हो?

चे०—(अपने सीने की ओर संकेत कर कैलाश की ओर देखता है) अगर आप लोग मेरी धृष्ठता क्षमा करें (स्वर लडखडा जाता है) मैं मैं चाहता हूँ म मेरा मतलब है मैं मैं नहीं कहता कि मैं इनके लिये (सुमित्रा की ओर संकेत कर) उचित वर हूँ परन्तु (दोनों हाथ आपस में मलते हुए) यदि आप समझें तो मैं उसे अपना सौभाग्य बनाना चाहता हूँ।

(कैलाश विस्मय के धक्के में उत्तेजना शिथिल हो जाने के कारण गहरी सास ले प्रश्न की दृष्टि से सुमित्रा की ओर देखता है। क्रोध और भी उग्र

हो जाने से सुमित्रा के माथे पर बल पड़ जाते हैं। वह एक कदम आगे बढ़, हाथ की मुट्ठी से हवा में प्रहार करती हुई चेतन को सम्बोधन करती है।)

सु०—अब आप मुझ पर दया दिखाना चाहते हैं? मुझे किसी की दया की आवश्यकता नहीं।

(सुमित्रा बहाते हुए आँसू रोकने के लिए क्रोध में होंठ काट लेती है। सब लोग विस्मय से सुमित्रा की ओर देखते हुए अवाक रह जाते हैं।)

चे०—(सुमित्रा की इस भर्त्सना से अविचल रहकर उसकी ओर देख द्रवित और लड़खड़ाते हुए स्वर में) मैं मैं तुम्हारा अपमान नहीं कर रहा हूँ। मैं मैंने अपने मन की इच्छा और गौरव की बात कह दी, मैं उसके लिये क्षमा चाहता हूँ। मैं तुम पर दया नहीं कर रहा हूँ, तुम्हारी दया से अपने जीवन को बनाना चाहता हूँ। (कैलाश को सम्बोधन कर) तुम जानते हो, मैं इनका कितना आदर करता हूँ। जो इन्हें कुरूप कहते हैं, वे झूठ बोलते हैं। वे अंधे हैं

सु०—(होंठ काट कर) आप झूठ बोलते हैं। मैं जानती हूँ, मैं कुरूप हूँ। दुनिया जानती है, मैं कुरूप हूँ। (प्रश्न की मुद्रा में हाथ उठा कर) क्या सारी दुनिया झूठ बोलती है? आप ही सच्चे हैं? आप झूठे हैं। मुझे कुरूपता का कोई डर नहीं, कोई लज्जा नहीं। मैं सुन्दर खिलौना नहीं हूँ।

चे०—(गम्भीर और स्थिर स्वर में) दुनिया? दुनिया खिलौना ढूंढती है। मैं इंसान का आदर करता हूँ। दुनिया के लोग तुम्हें देख नहीं पाये। वे जिस आँख से देखते हैं, वह आँख ही टेढी है। मेरी आँखों पर दहेज के लोभ की पट्टी नहीं बँधी है इसलिए मैंने तुम्हें देखा है

और पहचाना है। मैं उस ज्योति का आदर करता हूँ।

(सुमित्रा का शरीर काप जाता है। वह दोनों हाथों से चेहरा ढँक लेती है। लडखडाती हुई अपने स्थान से चेतन की ओर दो कदम बढा आसू भरे गले से अनुनय करती है)

सु०—आप झूठ नहीं बोलते थे। मैं सदा आपका विश्वास करती रही हूँ। आप ऐसी बात न कहिये! मुझे ऐसे ही रहने दीजिये! (मुह ढाँप कर दीवार-के समीप चला जाता है)

कै०—(आश्वासन देने के लिए सुमित्रा के समीप जा और उसका कधा छू कर) सुमित्रा! सुमित्रा!! सुनो! क्या कहे जा रही हो? घबराती क्यों हो? तुम जानती हो, चेतन भाई झूठ नहीं बोलते!

मा—(पिता को सम्बोधन कर) एजी! क्या हो गया तुम्हें? क्या कहते हो? (पिता के उत्तर की प्रतीक्षा मे गाल पर उगली रख सब की ओर देखती है)

पिता—(मूढता से जाग, गहरा साँस ले कर सुमित्रा की माँ की ओर देख कर) हा? क्या कहती हो कैलाश की मा? भगवान भला करें, अच्छा! (चेतन को सम्बोधन कर) भैया, तुम लोग कौन ब्राह्मण हो?

(पटाक्षेप)



गुडबाई दर्दे-दिल

एकांकी नाटक

अथवा

दृश्य कहानी

वर्मा—बे परवाही से कोट, पतलून पहने, बिना नकटाइ और टोपी के है। उसकी विचार धारा और स्वभाव उग्र है।

अन्य पात्र—सड़क पर आते जाते कुछ लोग और बोझ उठाये गुजर जाने वाले दो कुली। इन पात्रों का नाटक की घटना और वार्तालाप से कोई सम्बन्ध नहीं। वे केवल दृश्य पूर्ति के लिये हैं।

(बंगले में)

वृद्ध—सम्पन्न मध्यमश्रेणी के अवसर प्राप्त ऊँच सरकारी अफसर। शशि और लीला के पिता। आयु लगभग साठ वर्ष।

शशि—अध्ययनशील, गम्भीर, अत्यन्त भावुक, सुन्दर युवती। आयु लगभग बाइस वर्ष।

लीला—शशि की छोटी बहिन। आयु लगभग अठारह उन्नीस वर्ष।

नवयुवक—यूनिवर्सिटी की ऊँची श्रेणी का छात्र। शशि के परिवार से हिलामिला या निकट सम्बन्धी।

गुडबाई दर्दे-दिल

(पर्दा उठता है)

[सध्या, लगभग पाच बजे का समय । मसूरी की एक खूब ढलवा सडक । सडक की दायीं ओर एक सीधा चट्टान दिवार की तरह चली गई है । दूसरी ओर काफी गहराई है । सड़क पर कई रिक्शाओं के ऊपर नीचे गुजर जाने से गहरी रेखायें बन गई हैं ।

सड़क की ढलवान की तरफ जाने वाले लोग खूब तेजी से, लुढ़कते से चले जा रहे हैं और चढाई की ओर जाने वाले हाँफते हुए, धीरे धीरे । पीठ पर भारी बोझ उठाये कुली झुके हुए, बहुत धीमे धीमे, छोटी लठिया का सहारा लिए हुए ऊपर चढ रहे हैं । उनकी तनी हुई पिंडलियों पर पसीने की धाराएँ चमक रही हैं ।

कुलियों द्वारा खींची जाने वाली पहाडी रिक्शाओं की घंटियों की आवाजें और रिक्शा कुलियों की पुकारें भी सुनाई देती हैं ।]

बचके बाबू साब ! बचो बाबू साब ! रोक के ! जोर लगाओ !

[एक रिक्शा सडक पर सामने आती है । रिक्शा की चाल चढाई के कारण बहुत धीमी है । रिक्शा में दो युवक केशव और रणजीत सवार हैं । उनके फलालेन के रंगीन कोटों, सफेद पतलूनों, सफेद जूतों और हाथ में टैनिस के बल्लों से ये टैनिस के खेल से लौटते हुए खिलाड़ी जान पड़ते हैं ।

एक बार फिर कुलियों की झुंझलाहट भरी पुकारें सुनाई देती हैं ।]

एक कु०—बचके बाबू साब !

दू० कु०—दाने (दाय) से जोर लगा बे !

तीसरा कु०—मैं तो लगा रा ऊ, देख !

केशव—(झुंझला कर) यार रणजीत, उतर जाओ। छोड़ो इस रिक्शा को। इससे जल्दी तो पैदल पहुंच जायगे। यह लोग नहीं खेंच सकेंगे। चढ़ाई ज्यादा है।

रण०—(उठने के लिए तैयार साथी की बाँह पकड़ कर रोकते हुए) नहीं यार, तुम बैठो। (कुलियों को सम्बोधन कर क्रोध के स्वर में) ऐ कुली! चलता क्यों नहीं? क्या तमाशा करता है?

कु०—हजूर, जोर लगाता है। बौत सक्त ऊँचा है। चगाइ में हजूर ऐसा इ जाता है।

केशव—(खिन्नता से) भई रणजीत मान जाओ! हटाओ इस झगड़े को। बहुत बुरा मालूम हो रहा है।

रण०—(आग्रह के स्वर में) नहीं केशव, सोचो जरा! पार्टी में जा रहे हैं! धूल से जूते और पैन्ट सभी खराब हो जॉयगे। अभी पहुँचे जाते हैं। (कुलियों की ओर घूम कर) एई कुली! क्यों तुम जल्दी नहीं चलता है? हम अभी उतर जायगा। क्यों तुम इतना कमजोर आदमी लाता है? देखता नहीं, दूसरा सब रिक्शा आगे चला गया?

केशव—(अपने साथी के समर्थन में) अरे ओ कुली! क्या बदमाशी करता है? जोर क्यों नहीं लगाता तुम लोग?

(कुली हाँफ कर एक साथ मिल कर जोर लगाते हैं। रिक्शा झटके से दो कदम बढ़ता है परन्तु सहसा दायीं ओर घूम जाने के कारण चट्टानों से टकरा जाता है। दायीं ओर का कुली सड़क पर गिर पड़ता है। रिक्शा झटके से आगे की ओर झुक जाता है।

रण०—(घबराहट में) अरे ! यह क्या ! क्या हुआ ? (रिक्शा से सडक पर कूद जाता है।)

केशव—(रिक्शा से कूद कर) हैं ? कुली गिर गया ? (कुलियों को सम्बोधन कर) अरे, देखो ! देखो, क्या हो गया इसे ? (चोट खाये कुली को देखने के लिए आगे बढता है परन्तु गन्दी चीज़ छू जाने के डर से रुक जाता है)

(तीनों कुली गिरे हुये कुली को घेर लेते हैं।)

प० कु०—(सिर थाम विलाप के स्वर में चिल्ला उठता है) हाय राम ! मेरा बाई मर गिया ! (रोने लगता है)

दू० कु०—(सान्त्वना देने के लिए हाथ हिलाते हुए) नइ, नइ, गबरा नइ, कुच नइ है ! बेहोस हो गिया। देख रे, साँस चलता है। (तीसरे कुली का सम्बोधन कर) ओ रमिया, तू जा जल्दी, नल से पानी ला।

रमिया—(विवशता में खाली हाथ दिखा कर) कैसे लायगा ? लोटा भाँडा तो नइ ए।

दू० कु०—(सिर से टोपी उतार कर कटोरे की तरह थमाते हुए) जा, इसमें पानी ले आ ! लाकर पानी पिला इसे !

(रणजीत और केशव आपस में बात करने के लिए चोट खाये हुए कुली से दो कदम दूर हट जाते हैं।)

रण०—(खिन्न स्वर में) ओह, व्हाट-ए मैस्स ?* अब क्या होगा ? यहाँ रिक्शा कैसे मिलेगी ? हाओ शल वी रीच ? पहुँचेंगे कैसे ? व्हाट स्काउन्ड्रल्स ? कैसे बदमाश हैं यह लोग ? (चिन्ता के स्वर में) अब क्या होगा ?

केशव—भई रणजीत ! अब पैदल ही चले चलो।

---

* क्या परेशानी है ?

रण०—नहीं, नहीं ! (रिक्शा में पड़े बरसाती कोटों और बक्सों की ओर संकेतकर) यह सब बोझा कौन उठायेगा ? जस्ट वेट !* (पानी लेने के लिए जाते हुए कुली को सम्बोधन कर) ऐ ! कुली , किधर जाता है ?

इ० कु०—हजूर, साथी गिर गिया, उसके लिए पानी लेन जाना !

रण०—(क्रोध में) वह सब फिर होगा ! पहले तुम हमारा वास्ते एक रिक्शा लाओ !

केशव—क्या करते हो रणजीत ? जब तक रिक्शा आयगी, हम कोठी पर पहुँच जायगे !

(इसी समय एक खाली रिक्शा उतराई की ओर आती दिखाई देता है।)

रण०—(रिक्शा को रोकने के लिए सड़क के बीच में हो और हाथ उठाकर) स्टाप, स्टाप ! रोको, रोको ! (उंगली से गोलाई में संकेतकर) पीछू , पीछे को गुमाओ,

(नीचे आती हुई रिक्शा के कुली रिक्शा को रोक कर चढ़ाई की ओर घुमा लेते हैं।)

रण०—(पहली रिक्शा की ओर संकेत करके) सामान उठाओ ! अमारा सामान उठाओ !

(दूसरी रिक्शा में सामान रख लिए जाने पर रणजीत और केशव रिक्शा में बैठ जाते हैं। रिक्शा चलने लगती हैं। पहली रिक्शा के कुली अपने चोट खाए साथी को छोड़ इस रिक्शा की ओर आ जाते हैं।)

कुली—(रणजीत और केशव को सम्बोधन करके) हजूर ? हमारा किराया ?

रण०—(खिन्नता में कुलियों की ओर घूमकर) तुम्हारा कैसा

---

* जरा प्रतीक्षा करो !

किराया ? तुमने हमको रास्ता मे छोडा, हमारा टाइम खराब किया। कोई किराया नहीं, जाओ ?

(रणजीत और केशव रिक्शा में जाते हैं। पहला रिक्शा का एक कुली भी किराया मांगता हुआ। उनके पीछे पीछे चल देता है।

नाचे की ओर से पैदल आने वाले दो युवक शर्मा और वर्मा और ऊपर की ओर से आने वाले एक प्रौढ गिरे हुए कुली को देख कर रुक जाते हैं और उसकी ओर बढ जाते हैं।)

शर्मा—(चोट खाये हुए कुली की ओर सकेत कर दूसरे कुली से) क्यों इस आदमी को क्या हो गया ?

कुली—हजूर गिर गिया। (अपना सीने की ओर सकेत कर) दम फूल के गिर गिया

वर्मा—कोई नई बात नहीं, यह तो रोज होता है। क्या किया जाय ? आदमी पशु की तरह बोझ खींचेगा तो यही होगा।

प्रौढ—(चोट खाये हुए कुली के समीप बैठ कर) इसका साँस तो चल रहा है। देखो, इसके मुँह में पानी डालो ! (विस्मय से) ओह ! इसके मुह से खून कैसे आ रहा है ?

कुली—हजूर पत्तर लग गिया।

प्रौढ—पत्थर ? किसने मारा पत्थर ?

वर्मा—(कष्ट की हसी में) हम आप सभी लोग इ हें मारते ह ?

कुली—किसी ने नइ मारा हजूर ! किस्मत का बात है। जोर से गाड़ी खेंचता, पाँव पिसल जाता।

प्रौढ—(होठ काट कर) यही तो तुम लाग समझते नहीं !

शर्मा—तुम गाड़ी क्यो खीचता है ? गाडी खेंचना जानवर का काम है।

वर्मा—(मुस्करा कर) यह इनका धर्म है। इससे इन्हें स्वर्ग मिलेगा !

कुली—हजूर, पेट का वास्ते !

शर्मा—पेट भरने के लिए क्या और काम नहीं ?

कुली—कुछ भी नई है हजूर, अम क्या करेगा ? जमीन तो गौंत तोड़ा है खेती के लिए। रुपिया नई और क्या करेगा ?

वर्मा—(उत्तेजना में शर्मा को सम्बोधन कर) और क्या कर सकता है यह ? समाज ने इसे परवशता से घेर कर इसी काम के योग्य बना दिया है भाग्यवानों के लिए सेवकों की आवश्यकता है। अपना बस चलते कोई अपनी पीठ पर क्यों चढ़ने देगा ? यह कुली पशु से सस्ता है। सवारी करने के लिए पशु को रोज खिलाना होगा, सवारी करो या न करो ! ऐसे लोगों को जरूरत के समय पुकार लिया जा सकता है। दो घन्टे जिंदा रहने के दाम देकर इन पर सवारी की जा सकती है। फिर इन्हें भूखा मरने के लिए छोड़ देने में अपनी कोई हानि नहीं ?

शर्मा—(खिन्नता से) क्या बक रहे हो ? मनुष्य के बारे में ऐसी बात कहते तुम्हें लज्जा नहीं आती ? अपनी इसी हृदय हीनता को समाजवाद कहते हो ?

वर्मा—(विद्रूप में हँस कर) तुम बहुत समझदार हो ! यदि मैं पीटे जाने की शिकायत करूँ तो तुम मुझ पर मार पीट की बात करने या हिंसा के प्रचार का इलजाम लगा सकते हो ! यही है न अहिंसा का मार्ग ?

प्रौढ—अरे भाई ! इस समय बहस की अपेक्षा (चोट खाये हुए कुली की ओर संकेत कर) इसकी कुछ सहायता करना ही अच्छा होगा। इसे अस्पताल क्या नहीं पहुंचा देते आप लोग ? शायद बच ही जाय। चोट खतरनाक नहीं मालूम होती । (वर्मा को सम्बोधन कर) इस कुलिया से उठवा कर, अस्पताल पहुँचवा दीजिये।

वर्मा—हस्पताल ? हस्पताल ले जाऊं ? किस हस्पताल में ले जाऊँ ?

प्रौढ—किसी भी हस्पताल में ले जाइये इसे। सरकारी अस्पताल में या सेवा समिति के हस्पताल में ही ले जाइये।

वर्मा—ओ हो। मेरा यह मतलब नहीं। आप समझे नहीं

शर्मा—(चिढ़ कर) तो क्या पूछ रहे हो ?

वर्मा—मैं यह पूछ रहा हूँ कि इसे इन्सानों के हस्पताल में ले जाऊँ या हैवानों के ? मुझे तो डर है। दोनों ही अस्पताल इसका इलाज करने से इन्कार कर देंगे।

शर्मा—वर्मा तुम्हें शर्म नहीं आती ? इन्सान का मजाक करते हो। तुम मजदूर किसान के राज के समर्थक बनते हो ? याद रखो ! दरिद्र नारायण का रूप है। दरिद्र की सेवा से ही नारायण प्रसन्न होते हैं। दरिद्र भगवान के चलते फिरते मंदिर हैं।

वर्मा—(हंसकर) तो फिर यह मन्दिर बढ़ने दो ! इन मन्दिरों की पवित्रता नष्ट करने की क्या आवश्यकता ?

प्रौढ—(करुणा भरे स्वर में वर्मा को सम्बोधन करके) भैया, इनसान के दिल में इनसान के लिए दर्द होना ही धर्म है। यही इनसानियत है। किसी ने क्या खूब कहा है—

दर्द दिल के वास्ते पैदा किया इन्सान को,
वर्ना तायत के लिए कम न थे कुर्रोबया !*

वर्मा—(विद्रूप से हस कर) दरिद्र के लिए दर्द दिल ? खूब ! (प्रश्न के लिये भौं ऊँचा कर) दरिद्र की सेवा का मतलब ? इसका मतलब है, दरिद्र को अपनी सेवा के लिए जिन्दा रखने की समझदारी ! दरिद्र के प्रति दर्द दिल दिखाने का मतलब है, दरिद्र को उसके दुर्भाग्य मे ही बहलाये रखने की चतुरता ! मै ऐसी सहृदयता और दर्द दिल को दूर से हाथ जोडता हूँ !

शर्मा—(घृणा से) तुम मनुष्य की सहृदयता समाप्त कर समाज में हिंसा और संघर्ष का सर्वनाश फैला देना चाहते हो ? यही है तुम्हारी श्रेणी संघर्ष की भावना !

वर्मा—(चुनौती स्वीकार करने के लिये सिर हिला कर) यदि दरिद्र का हिंसा और शोषण से आत्मरक्षा की बात सोचना ही तुम हिंसा समझते हो, तो लाचारी है ! अच्छा होता, दरिद्र तुम्हारी दया को ठोकर मार अपने बस जीने या मर जाने की बात सोचते ! वे भागवानों के दर्द दिल पर न पलते ! दर्द दिल के इस धोखे को मैं हाथ जोडता हूँ ।

शर्मा—(क्रोध में) तुम चाहते हो स्वामी सेवक मे पिता पुत्र का भाव मिट कर वे एक दूसरे के खून के प्यासे बन जायें ?

वर्मा—मै चाहता हूँ, नगर के सब दरिद्र आयें और अपने स्वामी पिताओं की यह दया देखें ! वे देखें, भागवानो में कितना दर्द दिल है ? भागवान दरिद्र को पेट पालने का अवसर देने के लिए उसकी सवारी करता है और जब बोझ

---

* वर्ना भगवान की महिमा प्रकट करने के लिये नक्षत्र ही पर्याप्त थे ।

से दरिद्र का शरीर दम तोड़ने लगता है तो भागवान् दर्दे दिल से उसे इलाज के लिए धर्मार्थ औषधालय में पहुँचाने की बात करता है। ऐसे दर्दे दिल का मैं कहता हूँ, अलविदा दर्दे दिल ! विदा हो दर्दे दिल ! गुडबाई दर्दे दिल !

प्रौढ—(खिन्नता से) तो क्या आप लोगों की बहस में यह बेचारा कुली यों ही दम तोड़ देगा ?

वर्मा—नहीं, यह यों ही क्यों दम तोड़ेगा ? अभी इसे बहुत से भागवानों को सवारी बनना है। चलिये (कुली को उठाने के लिए झुक कर और दूसरे कुलियों को सम्बोधन कर) साथी आओ, तुम कमर में हाथ लगाओ (दूसरे को पुकार कर) तुम घुटनों से पकड़ो। इसे रिक्शा में लिटाओ इसको हस्पताल ले चलें !

(सब मिलकर कुली को उठाने का उपक्रम करते हैं)

(पटाक्षेप)

× × ×

दूसरा दृश्य

[समय, संध्या लगभग छः बजे। एक छोटे बंगले के सामने लान में चाय की तिपाई के चारों ओर कुछ कुर्सियाँ लगी हैं। एक कुर्सी पर एक वृद्ध शाल से शरीर को ढँके एक प्याले से धीमे धीमे चाय की चुसकियां ले रहे हैं। उनके समीप दूसरी कुर्सी पर एक बीस बाइस बरस का नवयुवक चाय पी रहा है। तीसरी कुर्सी पर वृद्ध की अठारह उन्नीस बरस की लड़की लीला प्रतीक्षा में बंगले की ओर आंखें उठाये है। वह चाय पीने के लिए वह अपनी बड़ी बहिन की राह देख रही है। वृद्ध और युवक में समय काटने के लिए बात चल रही है। बंगले से ग्रामोफोन पर रिकार्ड बजने की ध्वनि और बीच बीच में ब्रिज की बैठक में होने वाली बातें भी सुनाई दे रही हैं]

(बंगले से अस्पष्ट आवाज़ सुनाई देती है)

वाह, पान के चार तुमने कैसे कहा था? सिर्फ ढाई सरों पर? पान के चार बिलकुल बन जाते! खेलना भी जानते हो?

वृद्ध—(चाय का घूंट भरते हुए) व्यायाम चीज़ तो अच्छी है, आवश्यक भी है परन्तु व्यायाम ऐसा होना चाहिए कि नियमित रूप से किया जा सके। लम्बी सैर सबसे अच्छा व्यायाम है।

न० यु०—(असन्तोष से) बाबू जी, चलने में क्या व्यायाम? मुझे तो तीन चार मील चलने से कुछ मालूम ही नहीं होता।

वृद्ध—ऐसा है तो मील भर की दौड़ लगाओ।

लीला—(शिकायत से ऊंचे स्वर में) दीदी आओ न! तुम्हारी राह तकते तकते तो चाय ठण्डी भी हो गई।

(बंगले के भीतर से उत्तर मिलता है।)

आई, लीला तुम प्याला बनाओ!

(बँगले के भीतर बजने वाले ग्रामोफोन पर। इस समय गीत के यह बोल सुनाई देते हैं।)

धोखा खाने वाले नयना हर दम धोखा खाते हैं।
गई उमरिया बीत
न आया मन का मीत!

(उसी समय बँगले के दरवाजे से कुत्ते के भौंकने की आवाज सुनाई देती है। लीला आहट पा घूम कर फाटक की ओर देखती है। फाटक से रणजीत और केशव आते दिखाई देते हैं। उनके पीछे एक कुली उनके बरसाती कोट और टेनिस खेलने के बल्ले उठाये हुए है। सबसे पीछे इन लोगों की पहले छोड़ी हुई रिक्शा का एक कुली आता है।)

लीला—(उल्लास से) ओहो! रणजीत भाई आखिर आ गये! (अपनी कलाई पर घड़ी देख, मुस्करा कर) शायद चार ही बजे होंगे! क्यों रणजीत भाई?

रण०—ओह, आईम सो सारी!× गेम ओवर+ होने में देर लग गयी

लीला—(विद्रूप से हंस कर) हां साहब, टैनिस खेलने वाले बड़े आदमी बैडमिन्टन खेलने वालों से क्या बात करें?

रण०—असल में तो देर लगी रिक्शा के कारण हाउ स्टुपिड फैलोज! इन्हें टाइम सेंस है ही नहीं!※

(बंगले के भीतर से पुकार)

कट फार पार्टनर्स!△

× बहुत अफसोस है + खेल समाप्त होने में

※ कैसे जाहिल लोग हैं? इन्हें समय की कद्र है ही नहीं।

△ नये सिरे से जोड़ चुनने के लिए पत्ते बाँटो।

श्री०—(केशव का सम्बोधन कर) भाई साहब, अन्दर जाकर देखिये। आप के साथी प्रतीक्षा से ऊब कर चौथे साथी के बिना कटथ्रोट खेलने बैठ गये। नया डील हो रहा है।×

(ग्रामोफोन पर फिर सुनाई देता है।)

धोखा खाने वाले नयना हरदम धोखा खाते हैं,
बीई उमरिया बीत, न आया मनका मीत।

(लीला आगन्तुकों की ओर से दृष्टि हटा कर बरामदे की ओर देखती है। लीला की बड़ी बहिन शशि बरामदे में आती दिखाई देती है।)

लीला—(शशि का सम्बोधन कर ग्रामोफोन के गीत का लक्ष्य कर) नहीं, दीदी नहीं, धोखा नहीं! देखो! सचमुच वो आते हैं! (रणजीत की ओर संकेत करती है।)

(रणजीत लीला की बात पर मुस्करा कर अपना सामान उठाये कुली को एक कुर्सी की ओर संकेत कर सामान रखने के लिए कहता है और जेब से बटुआ निकाल कुली को दो रुपये देता है)

कुली—(रुपये हाथ में लेकर और माथा छू कर गिड़गिड़ाता है) हजूर कुछ बकसीस मिलता।

केशव—(विस्मय प्रकट करने के लिए त्योरियां चढ़ा कर) अरे! आठ आना तुमको बकशीश दिया साहब ने! और तुम क्या लेगा? जाओ, तुम लोग बड़ा लालची है।

वृद्ध—(समझाने के लिए तर्जनी उठा कर) भई, तुम्हें पहले डेढ़ रुपया उसे देना चाहिए था। बकशीश मांगने पर चार आने और दे देते। इससे तुम्हारे चार आने बचते (कुली की ओर संकेत कर) और उसे अधिक संतोष होता।

×—नये खेल के लिए पत्ते बँट रहे हैं।

(पहला रिक्शा का एक कुली जो रणजीत और केशव के पीछे पीछे आकर चुपचाप एक ओर खड़ा था, आगे बढ़ आता है।)

कुली—(हाथ जोड़ कर) हजूर, हमारा रिक्सा का किराया नई मिला ? हजूर ने पहले हमारा रिक्सा किया था।

रण०—(झुंझलाहट में) तुम्हारा रिक्शा किया था ? तो तुमने हमको पहुचाया ? हम पैसा उसको देगा जो हमको जगह पर पहुँचायेगा !

केशव—(घृणा प्रकट करने के लिए नाक सिकोड़) ओहो ! क्या जानवर है ! मरते आदमी की फिकर नहीं पैसे के लिए दौड़ा आया है ! हाट ब्रूट्स ?*

कुली—(हाथ जोड़ कातिर स्वर में) हजूर ! अमारा आदमी मर जायेगा, तो अम क्या करेगा ?

चन्द्र—(सहम कर घबराहट से) हैं ? क्या आदमी मर गया ? क्या कहा ? कहा ? आदमी कैसे मर गया ?

रण०—(उपेक्षा से सिर हिलाते हुए) ओह, नो, नो ! नथिंग लाईक दैट ! ओनली ए कुली ! जरा, यों ही ए माइनर ऐक्सीडेन्ट ! △ ऐसे ही दमफूल कर गिर पड़ा होगा। कोई खास बात नहीं !

चन्द्र—(दोनों हाथों से कुर्सी की बाँहें पकड़ कर चिन्ता और घबराहट के स्वर में) ऐक्सीडेन्ट ? कुली दम फूल कर गिर पड़ा ? (कुली को सम्बोधन कर) क्या तुम्हारी रिक्शा का आदमी था ? क्या हुआ ?

रण०—(कुली को पीछे हटने का संकेत करते हुए) ओह, नो, नो'

---

* कैसे जानवर हैं ?

△ नहीं, नहीं ऐसी बात नहीं है ऐसे ही एक कुली की बात है ! मामूली सी घटना !

इन लोगों का लालच तो देखिये। (कुली की ओर घूम कर) बदन में ताकत नहीं तो तुम रिक्शा खींचने क्यों आता है? रुपये आठ आने के लिए दूसरे आदमी का वक्त खराब करता है? तुमको शर्म नहीं आता?

केशव—(रणजीत के समर्थन में कुली को धमकाने के लिए) क्यों तुम ऐसा कमजोर आदमी लाया? तुमने हमारा सवा घन्टे टाइम खराब कर दिया!

लीला—(विस्मय से) सवा घन्टे? गुडनेस! † मैं तो चालीस मिनिट में लाइब्रेरी से यहाँ पहुँच जाती हूँ।

युवक—(तर्जनी उठाकर) अगर पचीस मिनिट में पहुँचा जाय तो और भी मजा आता है। दैट इज गुड एक्सरसाइज ‡ जरा शरीर हल्का हो जाता है।

रण०—(खिन्न हो कर) यू काल दैट एक्सरसाइज? इसे आप कसरत कहेंगे? धूल रौंदते चलना? पैंह! एक्सरसाइज के लिये आप गोल्फ खेलिये या टैनिस खेलिये!

(बंगले के भीतर से खेल में हर्षोल्लास की ध्वनि)

ये मारा!

शाबास मेरे शेर!

केशव—(खेल में शामिल होने को व्यग्रता में लीला से) भई मैं गेम जाइन* कर रहा हूँ। मेरे लिये चाय वहीं भिजवा देंगी आप? (भीतर चला जाता है।)

वृद्ध—(आँखें मूंद आकाश की ओर हाथ जोड़ते हुए) हे भगवान! मुझे कभी लोगों के कंधों पर चढ़ कर न चलना

---

† भला हो! ‡ अच्छा व्यायाम हो जाता है!

* खेल में शामिल होना

पड़े। मेरी ऐसी अवस्था कभी न हो!
उससे पहले ही मुझे दुनिया से उठा लेना!

(शशि आकर एक कुर्सी पर बैठ गई थी। वह कुली के सम्बन्ध में होती बातचीत को ध्यान से सुनती हुई चुप रह जाती है। उसके चेहरे पर भयंकर दुर्घटना देखने की घबराहट के चिन्ह दिखाई देते हैं। वह निढाल हो गर्दन हिलाती है, जैसे गरमी से दिल घबरा गया हो।)

शशि—(सीने पर हाथ रख) क्षमा कीजिये, मैं जरा भीतर जाऊँगी!

रण०—(शशि की ओर देख सहानुभूति की मुस्कराहट से) क्या बैडमिंटन में थकान अधिक हो गई?

(शशि रणजीत की बात का कोई उत्तर न दे एक हाथ आँखों पर रख सिर कुर्सी की पीठ से टिका देती है)

लीला—(रणजीत को चुप रहने का संकेत कर) रहने दीजिये। दीदी अभी ठीक हो जायगी।

रण०—(लीला से धीमे स्वर में) क्यों? क्या बात है?

लीला—(रणजीत की ओर बढ़ कर धीमे स्वर में) कुछ नहीं। शायद, वो कुली की बात है। बहुत भावुक हो गई हैं दीदी। उस दिन बिल्ली ने कबूतर को पकड़ लिया तो यह रो पड़ीं। दिन भर खाना नहीं खा सकीं। ऐसी बातों से इन्हें ऐसा ही होने लगता है।

रण०—(बात समझकर परिस्थिति सम्भालने के विचार से) ओह, इज दैट इट? (शशि को सुना सकने के लिये ऊँचे स्वर में कुली को सम्बोधन कर) एई, देखो! फिर ऐसा मत करना! (बटुए में से एक नोट निकालते हुए) यह लो, पाँच रुपया! जाओ सिर न खाओ। (लीला की ओर घूमकर

ओ हो, यह बात है!

धीमे स्वर म) आई थिक दट इज आल राम्ट नाओ ?△

वृद्ध—क्या पाच रुपये दे दिये ? अच्छा किया। (कुली को सम्बोधन कर) देखो, जाकर उस आदमी को खूब गरम गरम दूध पिलाओ ! तुम लोग बडी महनत करते हो, तुम्हें अच्छी खुराक खाना चाहिये ! (लीला को सम्बोधन कर) बेटा छ बज गये होंगे। मैं घूम आऊ । जरा बदलू को आवाज देना, मेरी छडी तो दे जाये।

लीला—(वृद्ध की कुर्सी की पीठ के पीछे लटकती छडी उठा सामने करते हुए) डैडी, भूल गये ? बदलू छडी तो पहले ही रख गया है। आपको ओवरकोट ला दू ? लौटते समय सर्दी हो जायगी !

वृद्ध—(छडी के सहारे उठते हुए) न, न, बेटा ! ओवरकोट से बोझ हो जाता है। चलने में सर्दी कहा मालूम होती है ? बैठने पर ही जाड़ा लगता है। (वृद्ध सैर के लिये बगले के दरवाजे की ओर चले जाते हैं)

लीला—(वृद्ध के कुर्सी से उठते ही शशि की कुर्सी के समीप आ रणजीत को सम्बोधन कर) रणजीत भाई, आप भी क्या दादा की तरह ब्रिज में जाइन्ड हुआ करेंगे ?

रण०—(कधे उचका कर समर्थन के भाव से शशि की ओर देख कर) नो, रादर नौट !* पत्त पीटने में मुझे कोई सन्तोष नहीं होता। क्यों शशि ? जरा यहा ओपन एयर † में बैठेंगे। (शशि के समीप की कुर्सी पर बैठ जाता है।)

△ मेरा खयाल है कि अब ठीक है।

* नहीं, जाने दो।

† खुली हवा में बैठेंगे।

लाला—(बगल की ओर जाते हुये) भई, मैं जाती हूँ। मेरा गम खराब हो रहा है? मैं आप लोगों के लिये चाय यहाँ ही भिजवा दूँ?

रण०—(आश्वासन से) ओह यस, दैट विल बि फाइन!* परन्तु चाय की जरूरत जल्दी नहीं है। भिजवा देना (शशि की ओर देख कर) क्या?

शशि—नहीं, कोई जल्दी नहीं।

(लाला भीतर चली जाती है। रणजीत अपनी कुर्सी शशि की कुर्सी के अधिक समीप खींच लेता है।)

रण०—(सहानुभूति के स्वर में) हाऊ आर यू फीलिंग नाऊ? कैसा लग रहा है? घबराहट तो नहीं मालूम हो रही है?

शशि—नहीं, कुछ नहीं! ठीक हूँ।

रण०—क्या (मुस्करा कर) जरा सी बात पर घबरा जाती हो?

शशि—क्या? मैं घबराई तो नहीं! कैसे? जरासी बात कैसी?

रण०—यही, कुली बुली का एक्सीडेंट! ऐसा होता ही है।

शशि—(गम्भीर हो जाती है) हूँ, जरासी बात?

रण०—(शशि को चुप देख) शशि!

शशि—(चुप)

रण०—(आग्रह से) शशि!

शशि—(गर्दन झुकाये) हूँ

रण०—क्यों? चुप क्यों हो?

शशि—नहीं तो! कहिये? क्या कहते हैं?

---

* हाँ, बहुत ठीक, यह ही होगा।

रम०—(गहरी साँस ले) म चाहता हू आज तुम्हीं कहो । म तो कई बार कह चुका।

शशि—(सिर झुकाये हो) हूँ । क्यों ? आज क्या थक गये ?

रम०—(उत्साह से) थक गया ? क्या कहता हो शशि ? तुमसे बात कहने म थक जाऊँगा ? दिस इज माई लाइफस पैशिन ! यही तो मेरे जीवन की एक साध है।

(बगले से दूसरे रिकार्ड की आवाज आती है)

उम्रे दराज माग कर लाया था चार दिन,
दो आरजू में कट गये दो इन्तजार मे।

रम०—(मुस्करा कर) यह सुनो ! शशि, रिकार्ड भी मेरी गवाही दे रहा है ! क्या मेरी जि दगी सचमुच आरज और इन्तजार म कट जायगी ?

शशि—(आँख उठा पर्वत श्रेणी को पार से परे देखने के प्रयत्नमें) आरजू और इन्तजार ! मैं सोचती हूँ, (गहरी साँस लेकर) एक बहुत बड़ी आरजू दिल में पैदा करूँ और फिर जीवन क अन्त तक उसके पूरे होने की इन्तजार करती रहूँ। छोटी मोटी आशायें और आरजूएँ किस काम की ? आये दिन पूरी हो जाती हैं और फिर जिन्दगी ऐसे भटकने लगती है, जैसे जि दगी का कुतुबनुमा (दिशाद्योतक) खो गया हो !

रम०—(शशि की भाति भावुकता प्रदशन के लिए गहरी साँस लेकर) आह, बट माइ केस इज डिफरेंट ! मेरी तो बिलकुल दूसरी ही बात है ! मेरी जि दगी की एम्बीशन,‡ आई मीन,× आरजू ! इतनी मुश्किल है कि शायद उसे दिल में लेकर ही एक दिन आँखें ब द कर लूगा एन्ड

---

‡ महत्वाकांक्षा × अर्थात्

आई विल डाई। (गदन ऊँची कर) एण्ड आई एम नाट सारी फार दैट! मुझे कोई गम भी नहीं इसके लिए। बिकौज आई लव यू मोर दैन माइ लाइफ!÷ तुम्हारे प्रेम में अगर मेरा जीवन भी समाप्त हो जाता है तो मुझे कोई शिकायत नहीं! गम नहीं! मुझे इसी में सन्तोष है। ओह, आइ एम हैप्पी इन पेन आफ लव×। मैंने दर्देदिल की दौलत जिन्दगी में पाई है। उसी को लेकर जिन्दगी काट रहा हूँ! (गहरा सांस लेकर) दो आरजू में कट गये, दो इन्तजार में! क्या खूब!

शशि—(दृष्टि को कुछ दूर सामने जमीन पर गड़ा, मुस्कराते हुए गहरी सांस ले) दर्द! दर्दे दिल! कितने प्यारे शब्द हैं रणजीत? इनके रस में डूब कर जिन्दगी समाप्त हो जाने से भी दुख न होगा। सच कहती हूँ रणजीत, जब तुम इंगलैंड में थे, बृहस्पतिवार के दिन तुम्हारे पत्र की प्रतीक्षा के लिए बरामदे में बैठी मैं पोस्टमैन की राह देखती रहती थी

रण०—(प्रसन्नता में टोक कर) ओह, रियली?† आई एम सो हेप्पी शशि! तुम्हारा बड़ा एहसान है मुझ पर

शशि—(चुप कराने के संकेत में हाथ उठाकर) सुनो!

रण०—(कुछ झेंप कर) आई एम सो सारी, डा डार्लिंग?═

शशि—मैं पोस्टमैन की इन्तजार में बैठी रहती। लोग खाना खाने के लिये बुलाते तो जान पड़ता, तंग कर रहे हैं। पोस्टमैन मुझे न देखेगा तो शायद पत्र देना भूल

÷ क्योंकि मैं तुम्हें अपनी जान से अधिक प्यार करता हूं।

× मैं प्रेम की पीड़ा से ही सन्तुष्ट हूँ।

† ओह, सचमुच, सुन कर बहुत खुश हूँ। ═ओह, माफ करना, हाँ प्रिय?

जायगा। बार बार घड़ी देखना। जान पड़ता, घड़ी रुकी चल रही है। मैं पेड़ों की छाया की ओर देख कर समय का अनुमान करता

रण॰ (उत्साह से गहरा साँस ले टोक कर) ओह, आई एम सो ग्रेटफुल शशि, मेरे कारण तुम्हें इतना कष्ट

शशि—(चुप कराने के संकेत में हाथ उठा) सुनो !

रण॰—(झेंप कर) ओह, आई एम सो सारी !

शशि—और जब पोस्टमैन आता, सिर्फ दूसरी डाक लेकर, तब मैं निराशा की चोट से घायल हो बिस्तर पर औंधे मुँह लेट जाती

रण॰—(प्रसन्नता से परन्तु बहुत गहरी साँस ले) ओह माई लव, आई एम सो सारी। शशि तुम्हारे पत्र के लिये मैं लण्डन में डाकखाने तक

शशि—(चुप कराने के संकेत में हाथ उठा और गहरी साँस ले) अब याद आता है तो सोचता हूँ, कितने मीठे और अच्छे स्वप्न थे वे ?

रण॰—(उत्साह से) शशि मैं तो तुम्हारी याद में व्याकुल होकर हाइड पार्क में जा बैठता था। एण्ड आई लास्ट माइ सैल्फ इन ड्रीम्स !×

शशि—तुम्हारा पत्र समय पर न आता तो मैं खा न सकती, सो न सकती और फिर

रण॰—(उत्साह से) हाँ फिर ?

शशि—सुबह भी नाश्ते के लिए खाने के कमरे में न जाती तो खानसामा ट्रे में नाश्ता लगा कर मेरे कमरे में रख जाता। मुझे खानसामा पर क्रोध आ जाता, क्या खाना

---

* ओह, मैं तुम्हारे प्रति बहुत कृतज्ञ हूँ × मैं स्वप्नों में खो जाता था।

ही सब कुछ है ? पेट में ठूँस लेना ही सब कुछ है ? क्यों खाये इन्सान ? दख में जि दा ~~ में ही क्या सुख है ? मै खाने का सामान खिड़की से बाग में फेंक देती

रण०—(सास भर) रियली ? आई एम सो क्वारी ! तुम्हारी याद में मुझे भी खाना अच्छा ही न लगता था। शैंम्पेन तक अच्छी न लगती । शशि जुदाई के वे दिन कितने हारिब्ल ॰ थे ? और कई हजार मील का डिस्टेंस × ! इतनी दूर की जुदाई ? आई एम हैप्पी । १ वो खत्म हो गई (चुप कराने के लिए शशि का हाथ उठाते देख) हाँ फिर ?

शशि—माली और साइस के बच्चों को मालूम था कि मैं खाना खिड़की से फेंक देती हूँ। जो बच्चे फैंका हुआ खाना उठाने के लिए दौड़ आते । बच्चों में उन टुकड़ों के लिए झगड़ा होता और फिर इस वजह से उनकी माँये आपस में लड़तीं

रण०—(रस भग से विक्षिप्त हो टोक कर) ऊफ, ब्रूट्स ! जानवार कहीं के ! इन लोगों से सैंटीमेंट और फीलिंग< की आशा ही नहीं की जा सकता । हाँ फिर ?

शशि—फिर मैं सोचती, काश ! यह लोग दर्द दिल का मजा जानते तो इन टुकड़ों पर जान क्यों देते ? प्रेम में डूब कर खाना भूल जाने का मजा इ हें नहीं मालूम ।

रण०—(मुस्करा कर खूब) शशि तुम बड़ा मसखरी हो ! फाइन ?

शशि—फिर मुझे नींद न आती । मैं प्रेम का उष्णता से तपती

॰ भयकर × दूरा १ मैं प्रसन्न हूँ < सहृदयता और भावुकता ।

हुए सिर पर ठंडा वायु का स्पर्श अनुभव करने के लिये खिड़की में सिर रख पड़ा रहती और सुनती

रमा०—(कौतूहल के स्वर में) क्या सुनती ?

शशि—भैया ! क्लब से आधी रात बीते लौटते। वे गुनगुनाते हुए आते, "लज़्ज़ते जिगर खाने को है, खूने जिगर पीने को। यह गिजा मिलती है लैला, तेरे दिवाने को !"

रमा०—(चौंककर उल्लास में) ओ, फाइन ! रियली* और फिर ?

शशि—और, एक और सुरीली, बहुत धीमी सी आवाज सुनाई देती, 'हुजूर आ गया ?" इस आवाज को मैं पहचानती था।

रमा०—(रहस्य तथा कौतूहल से शशि की ओर झुक कर) किस का आवाज थी वह शशि ?

शशि—हमारे कश्मीरी बावर्ची की बड़ी लड़की नसीरन का।

रमा०—(उल्लासमय कौतूहल से) रियली, सच ?

शशि—फिर भैया अपना स्वर कोमल बना कर पूछते— "नसीरन, अभी तक जाग रहा हो ?'

रमा०—यस दैन ?= फिर ?

शशि—उत्तर न पा कर, भैया फिर पूछते—"नसीरन उदास क्यों है ? अच्छा मुस्कराओ एक बार !"

रमा०—(पुलक भरे स्वर में) ओ हो बाई जाव † ! सचमुच ? बड़े दिल फैंक हैं। खूब, अच्छा फिर ?

शशि—फिर कदमों के पास पास होने का आहट ! कुछ पकड़ने और छुड़ाने की आहट ! और नसीरन का नखरे से भरा स्वर, "न ना नहीं !"

---

* सचमुच ? खूब ! = हाँ, तो ? † मेरी कसम !

रण०—(उत्सुकता म सांस रोक कर) दैन ? फिर ?

शशि—फिर दो चार रुपयों के खनकने की आवाज आती और ऐसी आवाज आती जैसे नन्हे से बच्चे के मुँह पर प्यार करने से आती है !

रण०—(उत्साह से अपनी जांघ पर हाथ मार कर) ओह, माई गुड नैस, वैरी रोमान्टिक, कमाल है दैन ! हां, फिर ?

शशि—(सहसा स्वर बदल कर) यह सब सुन कर तुम्हें बहुत रस मिल रहा है रणजीत ?

रण०—(स्वर बदल कर) नो, नो ! सटलली नाट !+ मुझे बहुत बुरा लग रहा है !

शशि—हूँ ! (सन्तोष प्रकट करने के लिये) मुझे भैया के लिये बहुत दुख होता ! उनका विवाह होने में कुछ ही दिन शेष थे ! मैं सोचती, वे नसीरन से प्यार करते हैं । डैडी उनका विवाह जबरदस्ती कर रहे हैं ! यह अन्याय है !

रण०—ओह, (चिन्ता के स्वर में) दैट वाज़ रियली ए प्राब्लेम ! दैन ?×

शशि—तो मुझसे एक अपराध हो गया ! मैं अपने आपको वश न रख सकी !

रण०—है क्या ?

शशि—मैं बाजार की ओर जा रही थी । भैया ने एक पत्र पोस्ट कर देने के लिये मुझे दिया । बारिश अधिक थी । मैं छतरी सम्भाले पत्र को लेटरबाक्स में डालने लगी परन्तु वह बाहर ही कीचड़ में गिर गया । भीग कर पते की स्याही फैल गई ।

+ बिलकुल नहीं, कभी नहीं । × यह तो वास्तव में समस्या थी, खैर फिर ?

शशि—वैरी सैड, ह्वाट एन एक्सीडेंट !

शशि—बड़ा शर्म मालूम हुई। दूसरा लिफाफा ले उस पर पता लिखने के लिये पता देखा। पता हमारी भाग्य भाबी का था। पत्र में केवल दो लाइनें देख विस्मय हुआ। आंखें उस पर फिर गई। लिखा था—

दिल में एक हूक सी उठती है, एक दर्द सा पैदा होता है।
हम उठ कर रोते हैं, जब सारा आलम सोता है!

रण०—स्ट्रेंज !=

शशि—बहुत बुरा लगा। भैया भाभी को भी धोखा दे रहे हैं। और नसीरन को भी!

रण०—सटनली ! दिस वाज़ बैड !+

शशि—मैं सोचती, यह धोखा क्या कि दर्द दिल की दवा है! नसीरन के मन और शरीर को प्यार कर सकने का मोल कुछ रुपये हैं सब कुछ खरीदा जा सकता है। आदमी को कैसे खरीद लिया जाता है? सोचा तुम भी इंगलैण्ड में यही कर रहे होगे!

रण०—(स्वर बदल कर) नो शशि, आइ एम ए डिफरेंट मैन !× मेरे दर्द दिल का मोल रुपया नहीं! मेरे दर्द दिल का मोल है मेरा अपना दिल। मैं न खरीदता हूँ न बेचता हूँ।

शशि—हाँ, अब तक मैं भी ऐसा ही समझती थी। लेकिन अब दूसरी बात देख रही हूँ।

रण०—मैंने कभी तुम्हारे साथ मोल तोल की बात की ?

शशि—(गम्भीर स्वर से) रणजीत, मुझे खरीदना कठिन है क्यों

---

* अकस्मात घटना समझो। = क्या विचित्र बात।

\+ निश्चय ही यह तो बुरी बात थी।

× नहीं मैं दूसरी तरह का आदमी हूँ।

कि मैं भूख से विवश नहीं हूँ। तुम अपनी रकम भर ही खरीद सकते हो।

रण०—(विस्मय से) क्या मतलब मैं क्या खरीदता हूँ ?

शशि—(मुस्करा कर) तुम ? तुमने मेरा दिल और विश्वास खरीदना चाहा मनुष्यता से नहीं, पांच रुपये से। एक आदमी की जान की कीमत पाँच रुपये लगा कर। दृष्टि दूर क्षितिज की ओर कर लेती है)

रण०—(विरोध के स्वर में) क्या कहती हो ? कैसे ? यू आर इन्सल्टिंग मि०*।

शशि—(दृष्टि क्षितिज की ओर किये) उस कुली की जान की कीमत तुम्हारी दृष्टि में क्या थी जैसे कोई कीड़ा पांव तले कुचल गया हो। परन्तु मुझे रिझाने के लिये तुमने उसके प्रति पांच रुपये की सहृदयता दिखा अपनी हृदय हीनता को मोल चुका दिया। तुम समझते हो, मेरे विचार में मनुष्य का मूल्य इतना ही है ? (रणजीत की ओर देखती हुई उत्तेजना में उठ कर चल देना चाहती है।)

रण०—शशि, लिसन! सुनो! (शशि को कदम बढ़ाते देख) एक बात सुनो!

शशि—(रणजीत की ओर घूम कर) क्या है ?

रण०—(अनुनय भरी दृष्टि और स्वर से) क्या मेरे प्यार का ? मेरे दर्दे दिल का यही बदला है ?

शशि—(विद्रूप में व्याख्या करा कर) आह दर्द दिल ? हूँ! (बिदाई के संकेत में बांह उठा कर हाथ हिलाती हुई) अलविदा दर्दे दिल! गुडबाई दर्द दिल!

(तेज कदमों से बंगले के भीतर चला जाता है।)

(पटाक्षेप)

---

* तुम मेरा अपमान कर रही हो।

लेखक की रचनाओं के सम्बन्ध में कुछ प्रमुख सम्मतियाँ—

× × ×

कहानी संग्रहों के विषय में :—

नेशनल हेरल्ड, जून १९४०

"यह कहानियाँ संसार की किसी भी भाषा की श्रेष्ठ कहानियों के संग्रह में ऊँचा स्थान पाने योग्य है।"

कविवर मैथिलीशरण गुप्त

"विधाता ने लेखक को मुक्तहस्त होकर प्रतिभा और शक्ति दी हिंदी कथा साहित्य अभी तक लेता ही रहा, राम कृपा से अब वह देने योग्य भी हो गया है। यह शक्ति हिंदी को ऐसी ही रचनाओं से मिल रही है ।"

उपन्यासों के विषय में .—

महापण्डित राहुल सांकृत्यायन

"यशपाल की पत्तूलिका स्थायी मूल्य की चीजों के लिए है 'देशद्रोही' संसार की उन्नत भाषाओं के उपन्यासों की तुलना में रखी जा सकती है

आजकल' दिसम्बर १९४९ —

'मनुष्य के रूप'—"उपन्यास वास्तविकता, कल्पना और उद्देश्यपरकता का अपूर्व मिलान है"

हिंदुस्तान—नयी दिल्ली (जून १९४९)

"मतविरोध होने पर भी लेखक की कला का लोहा मानना ही पड़ता है ।"

राजनैतिक निबन्धों के विषय में —

आचार्य नरेन्द्रदेव वाइस चांसलर, लखनऊ विश्वविद्यालय

'इन लेखों को पढ़कर आपके होठों पर जो मुस्कराहट आयेगा वह आत्मविस्मृति और आनन्दोल्लास की न होकर क्षोभ, परिताप और करुणा की होगी । लेखक आत्मविस्मृत समाज को कलम की नोक से गुदगुदा कर जगाने की चेष्टा करता है और समाज को जागते न देख कभी कलम की नोक समाज के शरीर में गड़ा भी देता है।

भदन्त आनन्द कौसल्यायन

'गांधीवाद की शव परीक्षा'—इस वर्ष की सर्वोत्तम और सर्वोपयोगी पुस्तक है '